मूल्य : तीस रुपये (30.00)

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली, द्वारा प्रकाशित
KALI AANDHI (Novel), by Kamaleshwar

जग्गी बाबू मेरे दोस्त हैं। होटल गोल्डन सन के मैनेजर। होटल के मैनेजरों के बारे में तरह-तरह की ऊंची-नीची बातें रहती हैं, पर जग्गी बाबू इस पेशे में अपनी तरह के अकेले आदमी हैं। मुझे मालूम है कि उन्होंने अपनी जिन्दगी को क्यों एक जगह रोक रखा है। कहने के लिए कुछ भी कहा जा सकता है। पर आदमी की तकलीफ की असलियत जानना शायद बहुत मुश्किल होता है।

औरों से क्या कहूं, अब तक खुद अपने घर में मैं यह साबित नहीं कर पाया कि जग्गी बाबू के भीतर एक ऐसा इन्सान बैठा हुआ है जो अपने लिए नहीं, दूसरों के लिए रोता है'''सच कहूं, तो मालती के लिए रोता है। मालती के लिए यह आदमी अपनी जिन्दगी को एक जगह पकड़कर बैठ गया है—न जिन्दगी को आगे बढ़ने देता है, न पीछे हटने देता है।

कभी आप जग्गी बाबू के कमरे में जाइए। होटल गोल्डन सन के टैरेस पर बने दो कमरों के अपार्टमेंट में वे अकेले रहते हैं। मैनेजर हैं, इसलिए उन्हें वहीं रहने के लिए जगह भी मिल गई है। उनके कमरे में दो खास चीजें हैं, एक डिब्बा, जिसमें उनकी प्यारी बिटिया लिली के खत रखे रहते हैं और दूसरी है एक घड़ी, जो हमेशा बंद रहती है। वक्त को नापते-नापते एक दिन वह अचानक रुक गई। जग्गी बाबू ने उसे चलाया नहीं। न उसे चाबी दी।

मैंने एक दिन उनसे पूछा था—यह घड़ी खराब हो गई है? जब आता हूं, हमेशा एक वक्त पर अटकी मिलती है!

जग्गी बाबू मुस्करा दिए थे। फिर बोले थे—क्या यह जरूरी है कि घड़ी खराब हो जाए, तभी रुके! उसे किसी खास वक्त पर खुद भी तो रोका जा सकता है'''

—तो इसे चलाया भी जा सकता है!

वे फिर फीकी-सी हंसी हंसे थे—तुम भी क्या बात करते हो! वक्त

चलता है···यह घड़ी चलते-बदलते हुए वक्त को सिर्फ नापती है। और वक्त को नापने की ख्वाहिश अब मुझमें नहीं है···

—तो वक्त को बदल ही दो···

—बदलने की ताकत सबमें नहीं होती···जिनमें होती है वे भी वक्त को बदलते-बदलते खुद बदल जाते हैं···वे, जिनके पास यह शक्ति है, शायद वक्त को बदलना भी नहीं चाहते···सिर्फ वक्त का इस्तेमाल करना चाहते हैं।

मैं जान रहा था कि जग्गी बाबू के भीतर की कौन-सी चोट बोल रही थी। एक तरह से कहें तो यह बहुत व्यक्तिगत चोट है पर खुली आंखों से देखें तो यह सबकी चोट है।

एक तरह से अब मैं भी राजनीति में हूं। करीब-करीब उन्हीं दिनों से, जब से मालती जी राजनीति में आईं। यों मैं मालती को बचपन से जानता रहा हूं। मैं मालती जी के पिता बैरिस्टर प्रतापराय के दफ्तर में असिस्टेंट था और वहीं से मालती जी के परिवार के साथ हमारा एक रिश्ता शुरू हुआ था। प्रतापराय जी की मृत्यु के बाद, या कहूं कि मालती जी की शादी के बाद मेरा संबंध कुछ टूट गया। प्रतापराय जी की मृत्यु के बाद मैं उनकी जायदाद की देख-भाल करता रहा। जब मालती जी राजनीति में आईं तो उन्होंने एक सहायक के रूप में मुझे फिर से अपने साथ बुला लिया था। तब से मैं मालती जी के साथ हूं।

जग्गी बाबू राजनीति की बातों में नहीं पड़ते। समझते सब हैं, पर बात कीजिए तो कतराते हैं। एक बार कुरेद दिया तो चिढ़कर बोले थे—यार, तुम्हारी यह राजनीति बड़ी घटिया चीज है···तुम लोगों ने इसे निहायत बेहूदा बना दिया है। तुम लोग सिर्फ चीजों का बखूबी इस्तेमाल करना जानते हो! ···बाढ़ आई तो उसे इस्तेमाल करो, सूखा पड़ा तो उसे इस्तेमाल करो, कहीं कोई लड़की भाग गई तो उसके भागने को इस्तेमाल करो···कहीं कोई मर गया तो उसकी मौत को इस्तेमाल करो···तुम लोगों ने आदमी के आंसुओं और जज़बातों तक को नहीं छोड़ा···उसकी आशाओं और सपनों तक को नहीं बख्शा···इससे ज्यादा घटिया बात और क्या हो सकती है कि दुखी और मुसीबतज़दा इन्सानों के सपनों तक का

इस्तेमाल तुमने कर लिया···खुदा के लिए, उसके सपने तो उसके लिए छोड़ दिए होते···ताकि वह अपनी बदहाली और मुसीबतों के बीच सपनों के सहारे तो जी लेता···तुमने···तुमने उसके सपनो को नारे बनाकर निचोड़ लिया ! अब क्या बचा है आदमी के पास ? खैर छोड़ो···कहां की बातें ले बैठे···

ज्यादातर जग्गी बाबू बातों को टाल जाते हैं। मालती जी की बात करो तो भी शामिल नहीं होते, ऐसे जताते रहते हैं जैसे मालती जी से उन्हें कुछ भी लेना-देना न हो। जैसे वे उनकी ज़िन्दगी में कभी आए ही न हों।

मालती जी एक धमाके के साथ राजनीति में आईं। सफलता की सीढ़ियां चढ़ती हुईं। जहां से उन्होंने शुरू किया, वहां से पीछे मुड़कर देखने की ज़रूरत उन्हें नहीं पड़ी। पहला चुनाव उन्होंने म्युनिसपल बोर्ड कमेटी का लड़ा···हंगामा बहुत हुआ। तरह-तरह की अफवाहें फैलीं। शायद इसलिए और भी ज्यादा कि जग्गी बाबू खजुराहो में एक टूरिस्ट होटल चलाते थे। जब पहली बार मालती जी ने घर से बाहर कदम रखा तो जग्गी बाबू बहुत खुश थे। कोई बहस करने लगे और कहने लगे — जग्गी बाबू, इस चुनाव में तो आपको खड़ा होना चाहिए था ! तो वे तपाक से कहते थे—देश के निर्माण में औरतों को भी आगे आना चाहिए। औरतें यानी हमारी आधी जनसंख्या जब तक इस तामीर में हाथ नहीं बंटाएगी, तब तक हर काम की स्पीड आधी रहेगी···यह बेहद ज़रूरी है कि हमारे घरों की औरतें आगे आएं और हर काम में मर्दों का हाथ बंटाएं···

और पहली बार जग्गी बाबू और मालती जी के पैर घर की दहलीज से साथ-साथ बाहर आए थे।

नौकर बिंदा बताता था कि मालकिन बहुत डर रही थीं और जग्गी बाबू उन्हें हिम्मत बंधा रहे थे—और स्पीच देने में क्या रखा है ? ये देखो मैंने तुम्हारी स्पीच लिख दी है···इसे रट लो, बस···

मालती जी कमरे में घूम-घूमकर स्पीच रटती रहीं थीं और जगह-जगह पर अटककर पूछती जाती थीं—यह क्या लफ्ज़ है ?

—ये ऑक्टराय, यानी महसूल···चुंगी जो टैक्स लगाती है। पूरा सेंटेंस इस तरह बोलना—गांवों से शहर आने वाले माल पर जो ऑक्टराय

यानी चुंगी का महसूल लगता है, वह आखिर तो वही गरीब किसान देता है जो हमे जिंदा रखता है! मेरा वादा है कि मैं अपने गरीब किसान और गांववाले भाइयों के हित में इस चुंगी के महसूल को खत्म करूंगी··· समझी, यहां पर तालियां बजेंगी, तब एक मिनट रुकना और आगे यों शुरू करना·· तो मेरे इस गरीब खजुराहो शहर के भाइयो और बहनो!

और यह क्रम जो चला तो रुकने को नहीं आया। सफलता मालती जी के कदम चूमती चली गई। आवाज गूंजती रही, एक चुनाव से दूसरे चुनाव तक। चुंगी की मेम्बरी से पार्लियामेंट के चुनाव तक। मैंने मालती जी के हर चुनाव अभियान में हाथ बंटाया है और वे आवाज़ें अब तक मेरे कानों में गूंजती हैं जो एक दिन खजुराहो म्युनिस्पल बोर्ड के चुनाव से शुरू हुई थीं—मेरे इस गरीब खजुराहो शहर के भाइयो और बहनो! मेरे जिले के भाइयो और बहनो! मेरे प्रदेश के भाइयो और बहनो! मेरे देश के भाइयो और बहनो!

यह आवाज फैलती गई। आवाज का दायरा बढ़ता गया। आवाज की गूंज गहराती गई। और जग्गी बाबू हर बार इस फैलती आवाज के साथ-साथ पीछे छूटते गए। पहली बार जब मालती जी जीती तो शहर की जनता ने उनका स्वागत समारोह किया था। दोनों एक ही जीप पर साथ-साथ बैठकर आए थे। मंच पर मालती जी और जग्गी बाबू एक-साथ ही बैठे थे। विदा मालाएं संभाले हुए था।

जिला परिषद् वाला चुनाव जीतने पर फिर स्वागत समारोह हुआ था। कारों की कतार में इस बार जग्गी बाबू पीछे आनेवाली कार में थे और मालाएं गोद में रखे बैठे थे। असेम्बली चुनाव में जीतने के बाद मालती जी बेतरह घिरी हुई थीं। जग्गी बाबू कारों की कतार में सबसे पीछे वाली कार पर थे और मंच पर जब चढ़ने लगे थे तो एक वालंटियर ने उन्हें रोक लिया था। वे अचकचाकर बोले—अरे भाई, मैं, मैं, मालती जी का···

वालंटियर ने अपने जोम में जवाब दे दिया था—हां, हां, यहां सभी मालती जी के घरवाले ही हैं। हटिए···नीचे उतरिए।

मेरी निगाह न पड़ती तो जग्गी बाबू अपमानित होकर सीढ़ियों से

उतर ही गए होते। वालिंटियर को डांटकर मैं उन्हें मंच पर ले आया था। कुर्सियां नहीं थीं तो एक मोढ़े का इंतज़ाम करके उन्हें बैठा दिया था। वे बैठे तो रहे थे, पर बेहद बुझे हुए थे। सफल होनेवाले के चारों तरफ कैसे मजमा जुटता है और सही लोग कैसे उससे दूर होते जाते हैं, इसका जीता-जागता उदाहरण जग्गी बाबू हैं।

उनका एलबम उठाकर देखिए। इस दुःखद सच्चाई की दास्तान तस्वीरें ही बता देंगी। तस्वीरों में से झांकता जग्गी बाबू का हंसता खिल-खिलाता और खुशी से भरा चेहरा खामोश और उदास होते-होते एक दिन बिलकुल गायब हो जाता है।

और तब वे सारा वक्त अपने खजुराहो वाले होटल पर ही गुज़ारने लगे थे। अफवाहें भी फैली थीं कि जग्गी बाबू का होटल होटल नहीं, वह तो लोगों को पटाने की शिकारगाह है। कि जग्गी बाबू ने अपनी बीवी को औरों के लिए छोड़ दिया है···आखिर पैसा बनाने के लिए कुछ तो करना पड़ेगा···यह साला अपनी बीवी को दांव पर लगा बैठा है!

खजुराहो वाले होटल में उन दिनों कई बार जग्गी बाबू से मेरी बातें हुई हैं। वे दोनों तरफ से दुखी थे। मालती को लेकर भी और इन अफ-वाहों को लेकर भी। और एक दिन मालती जी से उनका झगड़ा हुआ था। मालती जी ने उनसे कहा था—आप यह होटल बंद कर दीजिए।

—लेकिन क्यों? जग्गी बाबू चीखे थे।

—इसलिए कि मैं पब्लिक में यह नहीं सुनना चाहती कि हम लोगों ने होटल को बहाना बना रखा है। कि यह होटल हमारी काली आमदनी का ज़रिया है···कि यह गंदे कामों के लिए इस्तेमाल होता है···इससे मेरी पब्लिक इमेज पर धब्बा लगता है···

—लेकिन मालती···जीने के लिए आमदनी का यह एक इज़्ज़तदार ज़रिया है।···

—और मेरी बदनामी का भी यही एक ज़रिया है।

—आखिर मैं कुछ करूंगा या नहीं? मुझे जीने और काम करने का हक है या नहीं···तुम समझती क्यों नहीं···

—समझती तो हूं पर राजनीति की इस दुनिया में साफ चेहरे रखने

के लिए बहुत नुकसान भी उठाने पड़ते हैं। और होटल का बंद होना कोई इतना बड़ा नुकसान नहीं है कि···आप मेरी खातिर इतना भी न कर सकें।

—फिर मैं करूंगा क्या ?

—क्यों, मेरे साथ मेरे काम में हाथ नहीं बंटा सकते ? इतने गैर लोग साथ रहकर काम करते हैं। कितनी चीजों को संभालना पड़ता है। आप दस कमेटियों के मेम्बर हो सकते हैं···गैर लोग मुझसे फायदा उठा सकते हैं पर आपके लिए मैं किसी लायक नहीं ?

—मैं तुम्हारा पति हूं··· फायदा उठा सकनेवाला गैर आदमी नहीं··· मैं तुमसे फायदा उठाऊंगा ? सोचो, क्या बात कही है तुमने ?

—कोई गलत बात तो नहीं कही। अगर एक औरत इस लायक हो जाए तो इसमें पति-पत्नी का रिश्ता···

—क्या कह रही हो तुम ?

—रिश्ते कामों को आसान करने के लिए होते हैं···बेड़ियां डालने के लिए नहीं। सही बात यह है कि आप अभी तक मेरी इस सेवा और त्याग की जिन्दगी, पब्लिक सर्विस की जिन्दगी से अपने को जोड़ ही नहीं पाए हैं।

—सही बात कहूं मालती। अब तुम्हें रिश्तों की जरूरत ही नहीं रह गई है।···खामख्वाह इन्हें ढोते जाने से अब तुम्हें कुछ हासिल होनेवाला नहीं है।

मालती ने उन्हें गुस्से से भरी आंखों से देखा था। और इतना ही बोली थीं—खैर···यह सब डिस्कस करने का वक्त मेरे पास नहीं है। चीफ मिनिस्टर छतरपुर आनेवाले हैं और उनके आने से पहले मुझे तमाम काम पूरे करने हैं···सात-आठ दिन छतरपुर रुककर मैं पन्ना चली जाऊंगी।

—मुझे जरूरत होगी तो तुम्हारे सेक्रेटरी से सब प्रोग्राम मालूम कर लूंगा।

और चलते-चलते मालती जी ने इतना ही कहा था—मैं 'होटल वाले की बीवी' कहलाती रहूं···यह आपको गवारा है तो ठीक है !

—तो तुम किसकी बीवी कहलाना पसन्द करोगी ?

—कैसी बातें करते हैं आप···मेरा मतलब आप अच्छी तरह समझ रहे हैं। मुझे उम्मीद है कि आप···

—कोशिश करूंगा।··पर जाने से पहले एक बात और कह देना चाहता हूं। मैं सोचता हूं लिली को किसी होस्टल में डाल दूं ताकि हमारी रोज़-रोज की चटखती और टूटती हुई जिंदगी की तकलीफ की छाया से वह अलग रह सके।

—यह हर बार लिली का वास्ता देकर मुझे कमज़ोर बनाने का ज़रिया आपने खूब ढूंढ़ रखा है? जब देखो तब लिली! अपनी मर्ज़ी की बात मनवाने के लिए आप हर बार लिली को आगे कर देते हैं। आइन्दा से आप लिली को पासंग बनाना बंद कीजिए!

—मैं लिली को पासंग बनाता हूं?

—और नहीं तो क्या?

—मालती···तुम समझती हो, मैं धमकी देता हूं! मैं बेचारा हूं··· पर मैं कहे देता हूं, मैं तो जाऊंगा ही, लिली को भी तुम्हारी जिन्दगी से कहीं बहुत दूर लेकर चला जाऊंगा···

—हूं, फिर वही दलील! वही वास्ता देने की आदत!

—इस बार मैं करके दिखा दूंगा···तुम समझती हो, मुझमें कुछ भी करने की शक्ति नहीं रह गई है!

—काश! वह दिन देखने को मिलता!

—ठीक है! ठीक है!···जग्गी बाबू गुस्से से उफन रहे थे—मैं लाचार नहीं हूं! मेरी बच्ची लाचार नहीं है···

तभी दरवाज़े पर दस्तक हुई थी। मालती जी समझ गई थीं कि उनका सेक्रेटरी जगतसिंह होगा। घड़ी पर नज़र डालकर उन्होंने इतना ही जग्गी बाबू से कहा था—अब ये नाटक बंद कीजिए···बहुत बार देख चुकी हूं···और एकदम प्रकृतिस्थ होकर उन्होंने जगतसिंह को आवाज़ दी थी—यस कम इन···और ऐसे हो गई थी जैसे कुछ हुआ ही न हो।

जगतसिंह कुछ ज़रूरी तार लेकर आया था। डायरी उसके हाथ में थी। मालती जी तारों को देखती रही थी और जग्गी बाबू चुपचाप कमरे से बाहर निकल गए थे।

और इस दिन के बाद सब कुछ एकदम तहस-नहस हो गया था। हम छतरपुर पहुंचे थे। मालती जी का दो हफ्ते का दौरा था। उन्हें महिला सेवादल का गठन करना था। तारीफ करूंगा मालती जी की भी। पूरे दौरे में कभी पता नहीं लगा कि वे कितना बड़ा तूफान मन में दबाए हैं। आखिर अपनी बच्ची का खयाल तो उन्हें आता ही होगा।

उनके नौकर बिंदा ने छतरपुर आकर खबर दी थी कि जग्गी बाबू ने खजुराहो के होटल में तीसरे दिन ही ताला डाल दिया था और लिली को लेकर वे कहीं चले गए थे। एक क्षण के लिए वे उदास हुई थीं। उन्होंने आंखें बंद करके अपने आंसू छुपाए थे और बच्चों के अनाथाश्रम की नई इमारत का उद्घाटन करने चली गई थीं।

अनाथाश्रम में तीस-चालीस बच्चे थे। खपरैल की छोटी-सी इमारत थी। अनाथ बच्चों का अपना बैण्ड था और वे बच्चे मालती जी के स्वागत में, उनके पहुंचते ही प्रार्थना गाने लगे थे—

वह शक्ति हमें दो दयानिधे, कर्तव्य मार्ग पर डट जावें
परसेवा, पर उपकार में हम जगजीवन सफल बना जावें
हम दीन दुखी, निबलों, विकलों के सेवक बन संताप हरें
जो हैं अटके, भूले भटके, उनको तारें हम तर जावें···

मालती जी की आंखों में रह-रहकर आंसू आ रहे थे और वे छोटे-छोटे बच्चों को प्यार से रह-रहकर चिपका लेती थीं। एक फोटोग्राफर बार-बार फोटो ले रहा था···और वहां जमा हुए लोग मालती जी की ममता देख-देखकर द्रवित और प्रसन्न हो रहे थे। उनके चेहरों पर मालती जी की ममता के लिए प्रशंसा की चमक थी। पर मैं जान रहा था कि यह कौन-सी हलचल थी···और मालती जी की आंखें रह-रहकर क्यों नम हो रही थीं! पर तारीफ करूंगा उनकी···कि कितना उन्होंने अपने को संभाला था और अपने एकांतिक दुख को वे कैसे चुपचाप पी रही थीं।

मुझे दिखाई दे रही थी—एक ट्रेन! उसमें बैठे हुए जग्गी बाबू और मासूम लिली! यह तो पता नहीं, वह ट्रेन कहां जा रही थी, पर इतना

मालूम था कि वह ट्रेन मालती जी से कहीं दूर, और दूर भागती जा रही थी।

और शाम को ही महिला सेवादल का गठन होना था। दोपहर का अनाथाश्रम वाला वह क्षण गुजर चुका था। और मालती जी ने अपने को संभाल लिया था। मैं एक कुर्सी पर चुपचाप बैठा सब देख रहा था।

महिलाओं की मीटिंग में वे बोल रही थी—आप बहनें कहती हैं कि आपको वक्त नहीं मिलता! मैं खुद कभी नहीं कहती कि आप अपने घर-परिवार और पति की खुशियों की कीमत पर राजनीति का काम करें। यह जरूरी है कि परिवार और पति की पूरी परवाह की जाए''' समाज की खुशी का असली आधार यही है'''अगर मैं अपना उदाहरण पेश करूं तो आप क्या कहिएगा! कौन कह सकता है कि मेरा परिवार और पति सुखी नहीं हैं! और मैं समाज के कामों के लिए भी पूरा वक्त निकालती हूं—तो बहनो, हमें एक महिला सेवादल बनाना है'''मुख्यमंत्री महोदय कल नगर में आ रहे हैं और उन्हें दिखाना है कि हम महिलाएं भी अपना मोर्चा संभाले हुए हैं ''आनेवाले चुनावों में हमें बहुत काम करना है''' मैं चाहूंगी कि कम से कम तीस महिलाएं आगे आएं और दल का निर्माण करें'''तो पहला नाम किसका लिखा जाए?

कई हाथ एकाएक उठे थे और मालती जी ने एक की ओर इशारा करके पूछा था—आपका नाम? उत्तर मिला था—लक्ष्मी अग्रवाल!

और मैंने वहीं बैठे-बैठे जैसे देखा था—पंचमढ़ी पब्लिक स्कूल की प्रिंसिपल के सामने जग्गी बाबू और लिली बैठे थे? प्रिंसिपल ने पूछा था—यस माई चाइल्ड, वाट्स योर नेम!

—लिली!'''लिली ने तुतलाते हुए कहा था।

—वेरी स्वीट नेम! लिली! सो यू विल लिव विद अस हियर?

—यस! लिली बोली थी।

और वापसी का सफर। जग्गी बाबू लिली को स्कूल में दाखिल करा के लौट आए थे। उनकी आंखें नम थीं। वे बार-बार खिड़की के शीशे को साफ कर रहे थे ताकि बाहर देख सकें, पर पानी की परत खिड़की के शीशे

पर नहीं, उनकी आखों पर छाई हुई थी। उन्होंने आस्तीन से आंखें सुखा ली थी। लेकिन वह वापसी का सफर घर-वापसी का नहीं था। वे खजुराहो लौट कर नही आए थे। सीधे भोपाल चले गए थे।

मैं किस की तारीफ करूं ? किसे दोष दूं ? किसे गलत या सही कहूं ?

एक तरफ जग्गी बाबू हैं और दूसरी तरफ मालती जी। और लिली ? वह बेचारी तो अबोध है। जग्गी बाबू की तकलीफ गहरी है तो मालती जी की महत्वाकांक्षा भी उतनी ही गहरी है। जग्गी बाबू का दुख गहरा है तो मालती जी का दुख भी कम गहरा नहीं है। दोनों ने अपने को बहुत संभाला है। मालती जी के चेहरे पर कभी शिकन नही दिखाई दी। जग्गी बाबू ने कभी शिकायत नही की। कभी बात भी करो तो वे टाल जाते हैं। सफलता कितनी क्रूर होती है, कितनी जालिम होती है, इसका नशा कितना गहरा होता है, और खुद अपनी सफलता में व्यक्ति कैसे कैद हो जाता है, इसका जीता-जागता उदाहरण हैं मालती जी। दुख और त्याग कितना जालिम होता है और इसमे व्यक्ति कैसे बुझ जाता है, इसका जलता हुआ उदाहरण हैं जग्गी बाबू !

मुझे वे दिन याद हैं जब मालती जी और जग्गी बाबू का मिलना-जुलना शुरू हुआ था। यह बात भी खजुराहो की है। यो प्रतापराय जी दिल्ली मे रहते थे, अपने पेशे की जरूरतों के लिए। लेकिन बीच-बीच में वे छुट्टी निकालकर अपने घर छतरपुर आते रहते थे। जग्गी बाबू खजुराहो के रहनेवाले हैं। उनका पुश्तैनी मकान वही है। एक बार घर के लोग खजुराहो गए हुए थे। रुकने का इंतजाम जग्गी बाबू के घर पर ही हुआ था। पूरा इलाका—पन्ना, रीवां, मैहर वगैरह। घूमने का इंतजाम वही से हुआ था। तब मालती जी की उम्र उन्नीस-बीस साल थी। अगले साल वे पढाई के लिए विदेश जानेवाली थी।

जग्गी बाबू की हवेली के पास, खजुराहो के मन्दिरों के नजदीक जहां बड़ा तालाब है, वहीं पर गुलाब का एक बाग है। काम कुछ करने के लिए था नहीं, मैं तालाब में बंसी डाले बैठा था। पीछे खजुराहो के मंदिर थे और बीच में गुलाब बाग। उस बाग में कोई कुछ बातें कर रहा था—ये गुलाब लाल क्यों हो जाते हैं? किसी लड़की की आवाज थी।

—असल में ये पीले होते हैं···यादों से भरी कोई आंखें जब इन्हें लगातार ताकती रहती है, तो ये लाल हो जाते हैं! लड़के की आवाज थी।

—सच! लड़की बोली।

—हां, और इन्हें यादों-भरी आखें देखना छोड़ दें, तो ये फिर पीले पड़ जाते हैं! लड़के ने कहा था।

—सच! लड़की बोली थी।

—हां!

—तो मैं एक पीला गुलाब तुम्हें देती हूं···देखूंगी, यह लाल होता है या नहीं?

—नहीं, तुम्हारे जूड़े में ये पीला गुलाब लगाऊंगा···जब तुम छतरपुर पहुंचना, तब देखना। मेरी ये यादों-भरी आंखें इसे ही ताकती रहेंगी और यह लाल हो जाएगा!

—सच! लड़की बोली थी।

मैंने मुड़कर देखा था। सूरज का लाल गोला मंदिरों के पीछे डूब रहा था और मालती तथा जग्गी बाबू गुलाब बाग से निकलकर लक्ष्मण मंदिर की ओर जा रहे थे। मालती के जूड़े में एक बड़ा-सा पीला गुलाब लगा था।

फिर हर रोज एक पीला गुलाब मैंने मालती जी के जूड़े मे देखा था, जब तक हम खजुराहो रुके थे।

छतरपुर लौटे तो प्रतापराय जी आए हुए थे। मालती जी के विदेश जाने की बातें शुरू हुई थी, पर मालती जी ने दृढ़ता से कह दिया था—मैं कहीं नहीं जाऊंगी···मैं भारत मे ही रहूंगी!

प्रतापराय जी ने मालती जी को बहुत समझाया था—तुम्हें अपने

कैरियर का भी खयाल करना चाहिए। शादी तो कभी भी कर सकती हो'''पर कैरियर बनाने का वक्त आदमी के पास ज्यादा नहीं होता।

लेकिन मालती जी नहीं मानी थीं और मालती जी की इच्छा के मुताबिक ही उनकी शादी जग्गी बाबू से हो गई थी। शादी के करीब एक साल बाद प्रतापराय जी की मौत हो गई थी और दो-तीन साल उनकी आयदाद की देखभाल मैंने की थी, उसके बाद जब मालती जी ने राजनीति के क्षेत्र में कदम रखा था, तो मुझे खजुराहो बुला लिया था। तभी से राजनीति की दुनिया से मेरा परिचय हुआ और मालती जी के सिर सफलता का जो पहला सेहरा बंधा, वह आज तक तो उतरा नहीं। सफलता उनके कदम चूमती चली गई और यह सफलता कुछ इस रफ्तार से आई कि उनकी और जग्गी बाबू की जिंदगी को तोड़ती, छोड़ती निकल गई।

बीच के कई बरस इसी नशे में निकल गए। जग्गी बाबू भोपाल में जाकर गोल्डन सन के असिस्टेंट मैनेजर हो गए। फिर बढ़ते-बढ़ते मैनेजर हुए और वहीं रहने लगे। लिली पंचमढ़ी में पढ़ती रही। उसे अपनी माँ से मिलने का मौका ही नहीं मिला और मालती जी चुनाव जीतती-जीतती एक दिन मिनिस्टर हो गईं!

बीच के कुछ बरस खामोशी के बरस हैं। या यों कहिए कि मालती जी की सफलता के बरस हैं और जग्गी बाबू तथा लिली के लिए अकेलेपन के बरस हैं। मालती जी में अद्भुत आत्मशक्ति और धीरज है। ऐसे मौके बहुत कम आए हैं जब उनकी व्यक्तिगत जिंदगी के दर्द का अहसास किसी को हुआ हो। लिली को लेकर भी उन्होंने कभी ज्यादा बात नहीं की। शायद उन्हें भरोसा था कि जिंदगी में वे जब भी चाहेंगी, लिली को भी जीत लेंगी। ताज्जुब यही होता था कि जग्गी बाबू को जीतने की बात कभी उनके मन में नहीं आई। फिर जीतते जाने तथा वक्त आने पर जीत लेने का आत्मविश्वास उनकी बड़ी शक्ति रही है।

लोकसभा के चुनावों के लिए जब उन्हें भोपाल क्षेत्र मिला और बातें हुईं कि हमें अभी से कुछ प्रभावशाली लोकल सामाजिक और राजनीतिक

का-1

लोगों से वहां सम्पर्क करना चाहिए, तो उसी 'जीत' वाले आत्मविश्वास से मालती जी ने कहा था—उन्हें जीत लेना मुश्किल नहीं होगा। वक्त आने दीजिए…अभी से अगर उन लोगों को यह अंदाज हो गया कि हमें उनकी जरूरत है तो उन्हें जीतना मुश्किल हो जाएगा! उन लोगों को यह अहसास होना चाहिए कि उन्हें हमारी जरूरत है।

'…सचमुच कितना धीरज चाहिए…वक्त आने दीजिए! उन्हें जीतना मुश्किल नहीं होगा!' मालती जी की यह नीति बेहद सफल साबित होती रही। वक्त! जरूरत! और जीत! इन तीनों बातों पर ही वे टिकी हुई थीं। वक्त की नब्ज को वे पहचानती थी। और जरूरत के हिसाब से वे सब तय कर लेती थी, उनकी यही शक्ति थी और इसी शक्ति में उनकी जीत निहित थी।

भोपाल क्षेत्र मिलने के बाद जब हमारा पहला काफिला वहां पहुंचा तो सारी जिम्मेदारी मेरे सिर पर थी, क्योंकि मेरा परिवार भोपाल में ही रहता था। मैंने पुराने भोपाल में एक बंगले का इंतजाम कर लिया था और चुनाव कार्यालय का बोर्ड लटका दिया था। धीरे-धीरे कार्यकर्त्ता आने शुरू हुए। कुछ लोकल लोग भी आए और हमारी जोड़-तोड़ शुरू हो गई। मालती जी एक दिन के लिए आईं और अपने कैंडीडेट होने का कागज भरकर चली गईं। उनके जाने से पहले जिम्मेदार कार्यकर्ताओं की एक मीटिंग हुई। इस बात पर गौर किया गया कि जाति के हिसाब से चुनाव-क्षेत्र में किसकी अक्सरियत है और चुनाव लड़ने के पैंतरे क्या होंगे। उस छोटी-सी अंतरंग मीटिंग का उन कार्यकर्त्ताओं पर भी बहुत असर पड़ा जिन्होंने मालती जी को इतने पास से पहली दफा देखा था, जब उन्होंने कहा—देखिए, हमें विरोधी दलों के हथकण्डे नहीं अपनाने हैं। चुनाव एक पवित्र कार्यक्रम है! हम जनता के पास अपना असली कार्यक्रम लेकर जाएंगे और जनता की समझ पर ही निर्भर करेंगे! पैंतरेबाजी और उठा-पटक का सवाल नहीं है। हम जातियों के आधार पर भी चुनाव नहीं लड़ेंगे क्योंकि हमारी नीति किसी खास जाति के लिए नहीं है, पूरी जनता के लिए है।

छोटे-छोटे कार्यकर्त्ता वाह-वाह करने लगे थे। मालती जी की यही विशेषता थी और यही बड़प्पन, जिसके सामने उनके विरोधी बौने हो जाते थे।

चुनाव कार्यालय में एक पूरी फौज जमा हो चुकी थी। खाने-पीने का इंतजाम रामनारायण के हाथों में था, इसलिए हमने उनका नाम फिलहाल भण्डारी रख लिया था। चुनाव कार्यालय में किंचित चालू हो गया था और बेकार के लोग भी बहुत भरे रहते थे।

बिंदा, मालती जी का विश्वस्त नौकर, परेशान था कि वे खाना क्या खाएंगी, मालती जी के लिए अच्छा खाना आ जाए। बिंदा मुझे रास्ते में जाता मिल गया था। तभी एकाएक मुझे याद आया था और मैंने पूछा था—गोल्डन सन जा रहे हो?

—भण्डारी बाबू ने वहीं से खाना लाने को बताया है!

—पता है, जग्गी बाबू आजकल वहीं मैनेजर हैं!

—कौन, अपने मालिक···! बिंदा की आंखों में एक चमक आई थी ···बहुत दिन हो गए, मालिक को देखा भी नहीं। उनको नमस्ते भी करता आऊंगा!

और बिंदा जग्गी बाबू का कमरा पूछकर नमस्ते करने गया था।

—अरे बिंदा! तू यहां कैसे? जग्गी बाबू ने आश्चर्य से पूछा था।

पुरानी यादों से बिंदा भर गया था और उसने जग्गी बाबू के पैर छू लिए थे। जग्गी बाबू कुछ अचकचाए थे। इतना ही बोल पाए थे—ठीक है, ठीक · यह पैर छूने की आदत कब से पड़ गई? अच्छी तरह तो है!

—बहुत अच्छी तरह हूं मालिक। आपका आशीर्वाद है! बिंदा ने उमड़ते प्यार और अपनी स्थिति के हिसाब से कहा था।

मालती जी ने जब खाना शुरू किया तो कागज की एक प्लेट में लहसुन की चटनी भी निकाली थी। मुझे मालूम है, मालती जी को लहसुन की चटनी बहुत पसंद है और गोल्डन सन जैसे बड़े होटलों में ऐसी चटनी नहीं

बनती। यह जग्गी बाबू ने खास तौर से बनवाकर रखवाई होगी। मालती जी ने अनजाने में ही कहा था—अरे बिंदा, इतने बरसों बाद इस लहसन की चटनी का ध्यान तुझे कैसे आ गया?

—आपको पसंद आई! भण्डारी ने खीसें निपोरकर पूछा था।

—यह मेरी वीकनेस है!···घर पर यह चटनी नहीं बनती थी तो नौकरों पर डांट पड़ती थी। अरे इस बिंदा ने कितनी डांट खाई है इस चटनी के लिए! पूछिए इससे···वे कहती रहीं और हंसती रहीं—इस जिंदगी में जब से आई···न जाने कितनी चीजों की याद तक नहीं रही। सामने पड़ जाती हैं तो ध्यान आता है···भण्डारी जी, अरे क्या नाम है आपका रामनारायण जी, मैं यहां रहूं तो यह चटनी जरूर मिलती रहे··· कहकर वे अन्य जरूरी बातें करती रहीं।

बातचीत के दौरान बिंदा ने अपने उत्साह में यह बताने की कोशिश भी की कि यह लहसन की चटनी खासतौर से बनवाकर जग्गी बाबू ने रखवा दी थी, पर मौका ठीक न समझकर मैंने बिंदा को आंख के इशारे से मना कर दिया था। भण्डारी बाबू भी चाहते थे कि चटनी का श्रेय उनके नाम ही रहे।

तमाम कार्यकर्त्ताओं पर मालती जी के भव्य व्यक्तित्व और उनकी बातों की पावनता का असर साफ जाहिर था। टी० टी० नगर क्षेत्र के अमजदअली मिर्जा तो पागल ही हो गए थे। बाहर उन्होंने ऐलान कर दिया था। ऐसे पाक-साफ और उसूलों पर चुनाव लड़नेवाले हमारे रहनुमा को कौन हरा सकता है! हमारी जीत तो अभी ही हो गई। भाइयो! हमारी जीत हो गई!

चलते-चलते मालती जी ने मुझे अलग बुलाकर एक आदेश दिया था —देखिए, इस चुनाव-क्षेत्र में बनियों की अक्सरियत है। खास तौर से शहरी इलाकों में। गांवों के जो इलाके हमारे क्षेत्र में हैं, उनके गरीब किसानों को भी यही बनिये वक्त-जरूरत रुपया वगैरह कर्ज देते हैं—यानी उन इलाकों में भी इनकी बांहें फैली हुई हैं। इसलिए जरूरी है कि बनियों के बीच से भी कोई कैंडीडेट इस चुनाव में खड़ा हो···

—यह आप क्या कह रही हैं ? मैंने बेहद ताज्जुब से कहा था—यह तो अपने पैर मे खुद कुल्हाड़ी मारनी होगी···कुछ सोचिए तो···

मालती जी मुस्कराने लगी थी। वह धीरज और आत्मविश्वास उनके चेहरे पर था। बगैर किसी तनाव के उन्होने कहा था—सुनिए, मेरी बात सुनिए···बनियों मे लाला दीनानाथ का बहुत असर है। आप उन्हें तैयार कीजिए कि वे चुनाव के मैदान मे आएं···पर्चे परसों तक दाखिल हो सकते हैं···

—लेकिन···मैं अचम्भे मे था।

—वक्त आने दीजिए···जो कह रही हूं वह करने की कोशिश कीजिए। समझे ! मालती जी का वही ब्रह्मास्त्र—वक्त आने दीजिए···

कुछ देर बाद सारी बात मेरी समझ मे आ गई थी और मैं मालती जी की अक्ल का लोहा मान गया था। उन्होंने अपने उसी लहजे में सब समझा दिया था—देखिए, हम जातिवाद के सहारे चुनाव नही लड़ेंगे यह बात साफ है। पर सच्चाई को भी देखिए। चुनाव मैदान में इत्तफाक से बनियों का कोई अपना कैंडीडेट नहीं है। लाला दीनानाथ के खड़े होते ही सारे बनिये उनके इर्द-गिर्द जमा हो जाएंगे···यह शर्तिया होगा, क्योंकि लोगो के मन में अपनी जाति के लिए लगाव होना लाजिमी है। लाला दीनानाथ के खड़े होते ही सब बनिये एकजुट हो जाएंगे और उनका समर्थन करेंगे···

—लेकिन इससे तो हमे नुकसान ही होगा ! मेरा शक उभर आया था।

—आप सुनिए तो, मालती जी ने कहा था—जब सारे बनिये लाला दीनानाथ के झण्डे के नीचे जमा हो जाएंगे, उस वक्त लाला दीनानाथ चुनाव मैदान से मेरे फेवर में विड्रा करेंगे ! समझे आप ! तब एक भी बनिया कहीं टूटकर नही जा सकता···

सचमुच यह बात बड़ा मार्के की थी। पर एक क्षण के लिए मन में बात आई तो मैंने हिचकते हुए पूछ ही ली थी—पर हम तो जातिवाद के आधार पर चुनाव लड़ना नही चाहते !

—गुरूसरन जी ! आपकी अक्ल जैसी की तैसी है। मालती जी ने मुस्कराते हुए कहा था। वे जब मेरा नाम लेकर कोई वाक्य शुरू करती थी,

तब मैं समझ जाता था कि अब वे मुझ पर कुछ गुस्सा हैं। पर उनकी खासियत यही थी कि बड़ी शालीनता से फिर भी बात करती रहती थीं। बोलीं—हम जातिवाद के आधार पर कहां चुनाव लड़ रहे हैं? मैं उनकी जाति की नहीं हूं! हूं…जनता के बीच काम करनेवाले की कोई जाति नहीं होती…समझे आप? लाला दीनानाथ अगर अपने जातिभाइयों को अपनी मुट्ठी में ले लेते हैं और वक्त आने पर हम लाला दीनानाथ को जीत लेते हैं तो इसमें हम कहां जातिवादी हो जाते हैं? बताइए! हमपर कौन इल्जाम लगा सकता है इस बात का? और हम कोई गलत बात कर भी नहीं रहे हैं…

मैं कन्विंस हो गया था। बात थी भी सही। ईमानदारी और बेईमानी में चार अंगुल का भी फरक नहीं है। यह सवाल चित और पट का है। एक ही स्थिति के ये दो पहलू हैं, अब यह आप पर है कि आप किस पहलू से देखते हैं। राजनीति यही है। और राजनीति की सफलता भी यही है कि आपका पहलू ईमानदारी से भरा और सही माना जाए।

शाम की गाड़ी से मालती जी जा रही थीं। स्टेशन पर काफी भीड़ उन्हें छोड़ने आई थी, मालाएं लिए हुए। और वे घिरी हुई खड़ी थी। इसी समय एक कार्यकर्त्ता ने मुझे बताया था—एक आदमी बिंदा को पूछ रहा है। बिंदा कहीं दिखाई नहीं पड़ता। ज़रा आप देख लीजिए और उसने इशारे से मुझे वह आदमी दिखा दिया था।

मैंने देखा—वह होटल गोल्डन सन का एक बेयरा था। वर्दी में। हाथ में एक बड़ा-सा पैकिट लिए था। मैं समझ गया था।

—यह मैनेजर साहब ने भेजा है। बेयरा बोला था।

—क्या है?

—रात का खाना है! बोला था, बिंदा साहब को देना!

मैंने पैकिट ले लिया था। गोल्डन सन के रैपर में लिपटा खाना मैंने बिंदा को थमा दिया था, जो भीतर डिब्बे में बिस्तर लगा रहा था। सूंघकर देखा था—लहसन की महक थी या नहीं…

—खाना तो भण्डारी जी ने रख दिया है। बिंदा बोला था—पर

इसमें चटनी जरूर होगी ! कहते हुए उसने जग्गी बाबू वाला पैकिट भी वहीं टिफिन कैरियर के पास रख दिया था।

मालती जी के जाने के बाद सरगर्मी और बढ़ गई। उनके व्यक्तित्व की धाक सबपर बैठ गई थी। चुनाव-कार्यालय में कार्यकर्ताओं की भीड़ बढ़ती जा रही थी। हम लोग शहरी और ग्रामीण इलाकों के लिए जीपों और साइकिलों का इंतजाम कर रहे थे। टेलीफोन जल्दी मिल जाए, इस कोशिश में लगे थे। पोस्टरों और पर्चों की छपाई हो जाए, यह भी देख रहे थे। चाहते यही थे कि पन्द्रह दिन बाद, मालती जी के आने के समय तक, सब कुछ पूरा हो जाए। हजार तरह के इंतजाम करने थे। घर-घर जाकर काम करने वालों के लिए बिल्ले चाहिए थे। हर आदमी बिल्ला मांगता आता था। लाउडस्पीकरों और बैटरी का इंतजाम होना था। चुनाव बुखार चढ़ने के बाद ये चीजें फिर नहीं मिलतीं। पेट्रोल टंकी वालों के पास हिसाब खोलना था। झण्डे और चुनाव-चिह्न बनने थे। झण्डों के लिए बांसों और लाठियों का इन्तजाम होना था। लाठियां इसलिए कि विरोधी पार्टियों वाले हर तरह की शैतानी पर आमादा हो सकते थे। कुछ दादा किस्म के लोगों को भी रोजनदारी पर रखना था। मालती जी की जीप के लिए ऐसा ड्राइवर चाहिए था जो जरूरत पड़ने पर दादागीरी भी कर सके। मालती जी का अपना ड्राइवर सुलतान अब इस लायक नहीं रह गया था। वोटरों की लिस्टें बननी थीं, परचियां तैयार होनी थीं। और सबसे ज्यादा मुसीबत राशन की थी। चुनाव-फौज बढ़ती जा रही थी। यों अभी इतना काम नहीं था, पर पन्द्रह-बीस रोज बाद जरूरत पड़नी ही थी, इसलिए इस वक्त किसीसे यह भी नहीं कह सकते थे कि अभी अपने घर जाओ। सबसे बड़ी दिक्कत खाने की थी। भण्डारी रामनारायण का बुरा हाल था। एक शाम तो वह हाथ झटकाकर खड़ा

हो गया—राशन हो, तो भी मैं इतने बेकार के खानेवालों का इन्तजाम नहीं कर सकता। यहां क्या साला भण्डार खुला हुआ है?

बेकार के कार्यकर्ताओं में से कुछेक ने यह बात सुन ली थी। बाहर बरामदे में खुसुर-पुसुर शुरू हो गई थी। भण्डारी अपने जोम में था, चीखकर बोला—तुम नहीं जानते गुरूसरन! इनमें से कितने ऐसे हैं जो काम विरोधी उम्मीदवारों का करते हैं और रोटियां यहां तोड़ते हैं!

गुस्सा तो मुझे आया था कि ऐसे हरामखोरों को लात मारकर फेंक दूं, पर मालती जी से मैंने बहुत-कुछ सीखा था—वही मूल मंत्र—वक्त! जरूरत! और जीत! हर काम वक्त पर करो, जब जरूरत पड़े तब आदमी को या स्थितियों को इस्तेमाल करो और जीत लो। मैंने भंडारी को समझा-बुझा दिया था, पर वह गुस्से में इतना ही कहकर चला गया था कि तो फिर राशन का इन्तजाम करो।

राशन की किल्लत थी, पर अपने प्रभाव और जोर-जबरदस्ती से हमने पूरा इन्तजाम कर लिया था। एक कमरा राशन से भरवा दिया था। इस काम में हमने जग्गी बाबू की मदद भी ली थी। जो कुछ इन्तजाम वह करवा सके, उन्होंने भी करवा दिया था। खास चुनाव के दिनों के इन्तजाम के लिए मैंने उनसे कह भी दिया था। उन्होंने हामी भर ली थी और हमारा एक बड़ा सिरदर्द खत्म हो गया था।

पर चुनाव ऐसी वाहियात चीज है कि सिर-दर्द खत्म नहीं होता, बल्कि बढ़ता ही जाता है। राशन की कमी इस इलाके में ही क्या, पूरे देश में है। और ये विरोधी पार्टियोंवाले नम्बरी शैतान लोग होते हैं। सच पूछिए तो इनका कोई जमीर नहीं होता। इन्हें तो बस मौका मिलना चाहिए और ये हर मौके को हंगामे में बदल देने में उस्ताद हैं।

पता नहीं कैसे, उन्हें यह सब पता चल गया···कि हमने काफी राशन का इन्तजाम कर लिया है। हमारे यहां आकर खाना खा जाने वाले उनके गुरगों ने ही खबर दी होगी। एक दोपहर हंगामा हो गया। विरोधी उम्मीदवार चन्द्रसेन के पक्षधरों ने शहर-भर के फकीरों को जमा करके मोर्चा भेज दिया। वे आकर चुनाव कार्यालय के सामने नारे लगाने लगे—

मालती जी ! हाय हाय !
हम भूखे-नंगे ! हाय हाय !

मैंने उन भिखमंगों की भीड़ को शांत करने के लिए एक छोटा-सा भाषण दिया, चुनाव-अभियानों में शामिल होते-होते इतना तो सीख ही गया हूं—भाइयो ! भूख और गरीबी...यह एक दिन का सवाल नहीं है ! हमें यह सवाल हमेशा के लिए सुलझाना है...और यही वजह है कि हमारी पार्टी और हमारी पार्टी की उम्मीदवार मालती जी इस चुनाव के मैदान में उतरी हैं, ताकि भूख और गरीबी को हमेशा-हमेशा के लिए नेस्तनाबूद किया जा सके ! सिर्फ आज शाम का खाना मिल जाने या कल सुबह का खाना हासिल हो जाने से मसला सुलझ नहीं जाएगा ! यह मसला इसीसे सुलझेगा कि आप अपने प्रतिनिधि के रूप में किसे चुनते हैं और वह प्रतिनिधि आपका सच्चा हमदर्द है या नहीं ! वह हमदर्द ही आपकी भूख मिटाने का पुख्ता इन्तज़ाम कर सकता है ! इसलिए भाइयो, आप इन टट-पूंजिये और मौके का फायदा उठाकर आपको इस्तेमाल कर लेने वाले इन दगाबाज़ छुटभइयों के बहकावे में मत आइए...और चुनावों के इस पवित्र कार्यक्रम को पूरा होने दीजिए !

मुझे ताज्जुब था कि मैं यह सब कैसे बोल गया था। किराये के लोगों के पैर नहीं होते...वे सब प्रदर्शनकारी फुसफुसाते हुए लौट गए थे। और हमारे साथी जगतसिंह ने मुझे सीने से लगा लिया था—यार, तुम तो बिलकुल मालती जी की तरह बोलते हो ! वही दमखम, वही इत्मीनान !

मेरी छाती दुगुनी हो गई थी। एक क्षण को लगा था कि मालती जी यदि इस करिश्मे को देखती तो बहुत खुश होती।

पर मेरी यह खुशी चंद घंटे भी टिकने नहीं पाई। विरोधी उम्मीदवार चन्द्रसेन ने शाम को ही एक मीटिंग में बोलते हुए बड़े गंदे तरीके से इलज़ाम लगाया—मैं मालती जी और उनकी पार्टी से पूछना चाहता हूं कि जब हमारे इस शहर के मामूली आदमी को राशन की लाइन में घंटों लगे रहने के बाद भी पेट-भर राशन नहीं मिल पाता, तब उनके चुनाव-कार्यालय में सैकड़ों बोरी अनाज कहां से आया है ? यह काले बाज़ार से

नहीं आया है तो कहां से आया है ? तो भाइयो, भूखी और नंगी जनता अब बर्दाश्त नहीं करेगी···मालती जी के लोग यहां चुनाव लड़ने नहीं, मौज-मस्ती काटने और दावतें उड़ाने आए हैं···हमारे पास इस बात की भी पक्की खबर है कि काले बाजार से सैकड़ों बोरी अनाज का इन्तजाम करने में एक बड़े होटल के मैनेजर भी शामिल हैं।···जनता पूछना चाहती है कि इतना अनाज किस राशन कार्ड से आया है ? जनता को यह पूछने का हक है···और मैं मालती जी को चुनौती देता हूं और कहता हूं कि वे दिल्ली में आराम न फरमाएं, बल्कि यहां आकर जनता को इस बात का जवाब दें ! यह जवाब उन्हें देना पड़ेगा !

सनसनी फैल गई थी और सारा वातावरण जहरीला हो उठा था। विरोधी दल ने बड़ी जलील चोट हमपर की थी। अफसोस इस बात का था कि चन्द्रसेन ने जग्गी बाबू को बिना नाम लिए ही लपेट लिया था। और मुझे लगने लगा था कि आगे चलकर वह जग्गी बाबू के नाम के जरिये शायद कोई और गंदगी उछालने की कोशिश भी करेगा।

मामला यहीं तक रहता तो ठीक था। पर इसके बाद तो भयानक काण्ड हो गया। मैं मालती जी को यह सब खबर देने के लिए जग्गी बाबू के होटल से फोन करने गया था। रात हो गई थी। मैंने फोन पर मालती जी को सब हाल बताया तो उन्होंने हमेशा की तरह बहुत आसान हल सुझा दिया—गुल्लसरन जी, आप ऐसा कीजिए···कल आधा राशन जरूरतमंदों में बंटवा दीजिए और कहिए कि यह इसीलिए जमा किया गया था···फिर उन्होंने डांट भी लगा दी—यह आप लोगों को आखिर सूझी क्या ? इतना राशन जमा ही नहीं करना चाहिए था। यह गलत काम है। आप लोग खुद यही गलतियां करेंगे तो विरोधी फायदा उठाएंगे ही···जो कार्यकर्ता हैं, उनके लिए ढाबों और कम-खर्च होटलों में इन्तजाम करवा दीजिए। उन्हें खाने के रोजाना नकद पैसे देते जाइए। इससे जनसम्पर्क भी बढ़ेगा। चुनाव कार्यालय में किचिन बन्द कर दीजिए। सिर्फ चाय-पानी का इन्तजाम रखिए ! समझे ! आप वक्त-जरूरत के लिए थोड़ा-सा राशन पड़ा रहने दीजिए, कल तक बाकी राशन बंटवा दीजिए !

लेकिन 'कल' कहां आने पाया ! मैं होटल से लौट ही रहा था, रात अंधेरी थी कि तभी दूर पर आग की लपटें उठती दिखाई दीं । मैं भागा-भागा पहुंचा, तब तक सब खत्म हो चुका था । विरोधी उम्मीदवारों के गुण्डों ने हमारे चुनाव-कार्यालय पर हमला बोलकर जो कुछ मिला, लूट लिया था, मारपीट भी की थी, और चुनाव-कार्यालय में आग भी लगा दी थी । भण्डारी रामनारायण के काफी चोट आई थी । जगतसिंह भी घायल हुए थे, कुछ और कार्यकर्ता भी । गनीमत थी कि सबकी जान बच गई थी ।

और सुबह शहर के अखबारों में सुर्खी थी—'नाराज और भूखी जनता ने चुनाव-कार्यालय में जमा अनाज लूट लिया !'

यह सरासर ज्यादती थी । जनता ने नहीं, विरोधी उम्मीदवारों के गुण्डों ने यह सब किया था ।

आखिर तीसरे दिन एक दूसरे अखबार में मैंने इस गुण्डागर्दी का पर्दाफाश किया, जिसका अच्छा असर जनता पर पड़ा । लेकिन अब दिक्कत चुनाव कार्यालय की थी । खास तौर से मालती जी की सुरक्षा की । हम एस० पी० से मिले और उन्होंने हमें भरोसा दिलाया कि ऐसी वारदातें वे भरसक नहीं होने देंगे और राय दी कि चुनाव के दौरान मालती जी के ठहरने और रहने का प्रबंध किसी ऐसी जगह किया जाए जो खुली हुई न हो ···जरूरत पड़ने पर जहां पुलिस का इंतजाम भी किया जा सके । विरोधी पार्टी के उम्मीदवारों को भी वे यही राय दे चुके हैं, क्योंकि पुलिस के लिए सबकी सुरक्षा एक-सी है !

ठीक भी था । पुलिस के लिए सब बराबर थे । और आपस में बहुत सोच-विचार करने के बाद सबसे सुरक्षित और ठीक जगह हमें गोल्डन सन होटल ही लगी थी । चूंकि चुनाव-कार्यालय दूर नहीं रह सकता था और हमें फोन की ताड़बतोड़ जरूरत थी, इसीलिए यह तय हुआ कि हम अपना कार्यालय गोल्डन सन होटल के एक कॉटेज में खोल लें और मालती जी के रहने का इन्तजाम किसी हवादार आरामदेह कमरे में कर दें—ताकि वे पास भी रहें और हर समय की भीड़भाड़ से बची भी रहें । यह इन्तजाम मालती जी ने भी पसंद किया था । होटल के मालिक हमारी पार्टी के

समर्थक भी थे और उन्हें यह तजवीज बहुत रास भी आई थी। बाद में खर्चे वगैरह के हिसाब के सिलसिले में यह भी कह सकते थे कि होटल के मालिक नरसी सेठ ने हमें फ्री जगह और खाना दिया था···यह सब मामले उस वक्त उठते हैं जब हारे हुए नेता इलैक्शन पिटीशन दायर करते हैं और अदालत में इलजाम लगाते हैं कि कानूनन खर्च किए जा सकने वाले रुपये से पचास गुना ज्यादा खर्चा किया गया है। नरसी सेठ पार्टी का आदमी था इसलिए हम खर्चे में खुलेआम बचत दिखा सकते थे। नरसी सेठ भी इस बात से खुश हुए थे कि बिना हींग-फिटकरी लगाए उनके व्यक्तित्व पर चोखा रंग चढ़ रहा था—और वे भामाशाह के खिताब के हकदार हुए जा रहे थे।

राजनीति ऐसा खेल है कि जब गोटियां बैठना शुरू होती हैं तो सब बैठती चली जाती हैं! खांचे में खांचा फिट होता जाता है।

आखिर सब सैट हो गया। होटल में पूरा इन्तजाम हो गया। हमारा नया कार्यालय खुल गया। लाला दीनानाथ भी हत्थे चढ़ गए। वे मैदान में आजाद उम्मीदवार की तरह खड़े हो गए और अपने जाति भाइयों को बटोरने लगे। उनके चुनाव-अभियान का खर्चा हम देने लगे। अब सिर्फ मालती जी के आने की देर थी। सो वह भी पूरी हो गई। हमें तार मिला कि वे इतवार को आ रही हैं।

नरसी सेठ ने जग्गी बाबू को बुलाकर खास हिदायत दी—देखिए मैनेजर साहब! यह हमारे होटल का सौभाग्य है कि मालती जी जैसी देश की नेता हमारे यहां रहेंगी और यहीं से जीत कर जाएंगी। आप खास तौर से खयाल रखिए कि उन्हें कोई तकलीफ न होने पाए···उनकी हर जरूरत पूरी की जाए···

—जी ! जग्गी बाबू ने धीरे से कहा था। मैं उस वक्त उनके दिल की हालत समझ रहा था। लेकिन मैं नरसी सेठ के सामने यह जाहिर भी नहीं करना चाहता था कि जग्गी बाबू क्या हैं···जो बात जिन्दगी मे खत्म हो चुकी थी, उसे जाहिर करने से फायदा ही क्या था ! पर जग्गी बाबू के चेहरे पर जो पीड़ा उस समय उभरी थी, वह सिर्फ मैं ही समझ सकता था।

—आपने बहुत मरी हुई आवाज मे सिर्फ 'जी' कहा ! क्या बात है जगदीश जी ! नरसी सेठ ने कुछ संशय से पूछा।

—नहीं, ऐसी कोई बात नही·· मैं होटल का मैनेजर हूं···और यहां आनेवाले हर मेहमान का खयाल रखना मेरा फर्ज है···आप बेफिक्र रहें, कोई कमी नहीं होगी ! जग्गी बाबू ने फटी हुई आवाज में काफी संयम से कहा था।

—आनेवाले हर मेहमान और मालती जी में बहुत फर्क है जगदीश बाबू। नरसी सेठ बोले थे।

—जी, मैं समझता हूं ! आप फिक्र न करें ! जग्गी बाबू ने जैसे मन पर बहुत भारी पत्थर रखते हुए कहा था। जग्गी बाबू को इस हाल मे देखना मेरे लिए मुश्किल हो गया था। स्थिति को सभालने के लिए मैंने इतना ही कहा था—नरसी सेठ, सब हो जाएगा। आइए जग्गी बाबू···मैं सब संभाल लूंगा।

पर नरसी सेठ ने मुझे रोक लिया था—आप जाइए मैनेजर साहब। गुरूसरन जी, आप एक मिनट रुक सकें तो मेहरबानी होगी।

जग्गी बाबू को इस तरह जाते मैं नही देख पाया था एकाएक मेरे मुंह से निकल गया था···आप जरा-सा रुकिए जग्गी बाबू, मैं भी चलता हूं। हां, बताइए नरसी सेठ···

नरसी सेठ जग्गी बाबू की उपस्थिति से कुछ अटक गया था और यह बात जग्गी बाबू ने मार्क की थी। लेकिन फिर भी नरसी सेठ ने इतना तो कह ही दिया था—गुरूसरन जी, एक सिफारिश आपको करवानी पड़ेगी ···मैं जानता हूं, मालती जी से यह काम सिर्फ आप ही करवा सकते हैं··· इलैक्शन हो जाने दीजिए, मुझे कोई जल्दी नही है।···

—जी, देख लेंगे…मैं किस खेत की मूली हूं…और लोग हैं जो और ज्यादा बड़े हक से कह सकते हैं। वह हो जाएगा नरसी सेठ! मैं जैसे-तैसे बात टालना चाहता था और इस दर्द भरी स्थिति से जग्गी बाबू को जल्दी-से-जल्दी निकाल लेना चाहता था। मैंने उनसे कहा था— आइए जग्गी बाबू! और हम दोनों बिना एक-दूसरे से आंख मिलाए, अपने में डूबे हुए, बरामदा पार कर आए थे।

'मालती जी से यह काम सिर्फ आप ही करवा सकते हैं।' यह जुमला जग्गी बाबू ने कैसे झेला होगा, मैं अंदाज नहीं लगा सकता। शायद उन्हें रोककर खुद मैंने बड़ी गलती की थी, पर मालती जी के संदर्भ में नरसी सेठ के पास मेरा रुकना और उनका चला जाना भी मुझे गवारा नहीं हो पाया था। नरसी सेठ का वह जुमला मुझे बराबर कचोटता रहा था। और अपना जुमला भी…'और लोग हैं जो और ज्यादा बड़े हक से कह सकते हैं…' जग्गी बाबू के सामने ही खुद उन्हें ही 'और लोगों' में शुमार करना कैसा लगा होगा? लेकिन मैं और कह भी क्या सकता था?…

•

मालती जी आ गई थीं, पर वे सीधे होटल न आकर पहले असगरअली मिर्जा साहब के घर चली गई थीं। बिंदा होटल में आ गया था। उनके साथ कुछ और लोग भी थे जो चुनाव-प्रचार के लिए खास तौर से आए थे।

मालती जी के आ जाने से रौनक तो हो ही गई थी, पर दिखावा कुछ ज्यादा ही बढ़ गया था। हरेक यही शो करने में लगा कि वह उनके कितने करीब है। इस दिखावे में लल्लू बाबू सबसे आगे थे। वे उनके साथ ही दिल्ली से आए थे और प्रचार-अभियान की स्कीमें सुझाने के अलावा वे यह ज्यादा जाहिर कर रहे थे कि उनसे ज्यादा मालती जी के बारे में कोई

नही जानता।

आते ही उन्होंने सब-कुछ जैसे हाथ में ले लिया। लल्लू बाबू खासे खुर्राट और पुराने खिलाड़ी हैं। गंजे और गलीज। उन्हें पसंद कोई नही करता, पर बर्दाश्त सब करते हैं। सबको ताज्जुब है कि मालती जी जैसी महिला और नेता के साथ वे कैसे चिपके हुए हैं। और पहुंचते ही उन्होंने सवाल शुरू कर दिए—गुरूरसन जी, कल कहां-कहां किस-किस इलाके में मीटिंगें हैं? जीपें कितनी आ गईं? अरे भई हां, मालती जी के कमरे का इतजाम हुआ···चलिए, जरा देख लें···

—वह हो गया है। मैनेजर साहब ने सब ठीक करवा दिया है। मैंने कहा।

—देख लेने मे क्या बुराई है? वे बोले।

उनकी जिद के कारण हमें जाना पड़ा। मुझे उम्मीद नही थी कि जग्गी बाबू खुद वहां होंगे। पर वे खुद सारा इंतजाम देख रहे थे। रूमबॉय नीली चादर लगाने लगा तो जग्गी बाबू ने टोका—सफेद चादरें लगाओ। इन्हें हटा दो। और कमरे में 'जग' की जगह एक सुराही रखवा दी थी। जग्गी बाबू को अभी तक याद था कि मालती जी को सुराही का सोंधा पानी बहुत पसंद था।

तब तक लल्लू बाबू ने टाग अड़ा दी—ये डनलप के गद्दे हटवाइए! ये बैड भी बाहर करवाइए। यह सब क्या है?

—सब हो रहा है! जग्गी बाबू ने जरा सख्ती से कहा।

—आपको मालूम है, मालती जी हमेशा जमीन पर सोती हैं। मैं कह रहा हूं, यह हटवाइए! बाहर कीजिए! लल्लू बाबू ने बड़े अधिकार से कहा—आप लोग अपनी टाग मत अड़ाइए। जो बताता हूं, वह करते जाइए।

—करने के लिए यह रूम-बॉय है। उसे बता दीजिए! जग्गी बाबू ने जलती हुई आंखों से उन्हें देखते हुए कहा था—और जो जरूरत हो, मुझे फोन कर दीजिएगा! कहते हुए वे कमरे से चले गए थे।

—यह आदमी निहायत मगरूर है। कौन है यह? लल्लू बाबू ने

रूम-बॉय से सवाल किया था।

—मैनेजर हैं, साहब!—रूम-बॉय ने कहा था और गद्दा उठाने लगा था।

—आप शांत रहिए···मैंने लल्लू बाबू का कंधा थपथपाते हुए बात को संभाला था।

—यह दो कौड़ी का आदमी···सूट पहन लिया, समझता है, लाट-साहब हो गया! आपने इस होटल में इंतज़ाम ही क्यों किया? उन्होंने मुझपर सवाल दागा।

—मजबूरी थी! मैंने कहा।

तभी पता चला कि मालती जी आ रही हैं। हम नीचे भागे। कुछ कारें आ चुकी थीं। कुछ आ रही थीं। नारे लगाते हुए कुछ लोग जोश से घुसे आ रहे थे—

मालती जी! ज़िंदाबाद!
मालती जी! ज़िंदाबाद!

खासा हुजूम हो गया था। मैंने पोर्टिको में देखा था। होटल के करीब-करीब सभी लोग खड़े थे। जग्गी बाबू नहीं थे। मैंने निगाह ऊपर डाली थी। जग्गी बाबू ऊपर टैरेस से चुपचाप सब देख रहे थे। तभी नरसी सेठ का आदमी आया था और मुझसे बोला था—मालिक ने कहा है, एक मिनट मालती जी को वहीं कॉटेज में रखिए···जब वे होटल की मेन बिल्डिंग में दाखिल होंगी, सेठ जी उनका स्वागत करेंगे!

काफी देर तक मालती जी चुनाव कार्यालय वाले कॉटेज में सब चीज़ों की तफसील लेती रहीं। जान-पहचान वालों से बातें करती रहीं। उनका हाल-चाल पूछती रहीं। हम सब लोग सारे प्रबंध के बारे में बताते रहे। तभी खबर मिली कि नरसी सेठ स्वागत के लिए तैयार हैं।

हम मालती जी को लेकर आगे बढ़े। होटल के सब लोग, तमाशबीन और कर्मचारी भरे हुए थे। मालती जी के लिए रास्ता बनाना पड़ा। फोटोग्राफर तस्वीरें ले रहे थे। जैसे ही मालती जी मुख्य दरवाज़े की नीचे वाली सीढ़ियों तक पहुंचीं, नरसी सेठ ने उन्हें माला पहनाई थी। कर्म

चारियों ने फूलों की वर्षा की थी और तब नरसी सेठ ने परिचय करवाया था—ये हैं हमारे होटल के मैनेजर मिस्टर जगदीश वर्मा !

मेरे लिए यह दृश्य हिला देने वाला था। मालती जी ने एकाएक उन्हें देखा था···जग्गी बाबू हाथ जोड़े नमस्ते कर रहे थे। मालती जी की हथेलियां जुड़ते-जुड़ते कांप गई थीं। और उनके हाथ की माला नीचे गिर पड़ी थी।

मालती जी बहुत थक गई हैं। हटिए···हटिए···कहता हुआ मैं उन्हें शेष लोगों के बीच की औपचारिकता से निकाल ले गया था। लिफ्ट में लल्लू बाबू भी घुस आए थे। मालती जी आंखें बंद किए उंगलियों से दोनों भवों के पास वाले हिस्से को दबा रही थीं, जैसे उनकी आंखों में एकाएक दर्द हो गया हो।

कमरे में पहुंचकर जो हाल उन्होंने देखा, तो एकदम बोलीं—इस होटल में बैड नहीं हैं ?

लल्लू बाबू ने लपककर टुम्म मारा—मैंने सोचा, आप यहां चुनाव के दौरान अगर जमीन पर सोएं तो···

—इस दिखावे की क्या जरूरत है ! यह सब मुझे पसंद नहीं। आप तो हद कर देते हैं लल्लू बाबू ! मुझे जमीन पर नींद नहीं आएगी, हो सके तो इसमें बैड लगवा दीजिए···मालती जी ने चिढ़ते हुए कहा था।

—मैनेजर साहब बोला था···बैड ही रहेगा और सफेद चादर रहेगा, पर साब बोला, नहीं, आप जमीन पर गद्दा बिछाकर सोएगा। कहते हुए रूम-बॉय ने लल्लू बाबू की ओर इशारा किया था।

—ये सारा तमाशा बंद कीजिए लल्लू बाबू ! मालती जी ने कहा था और कुर्सी पर माथा पकड़कर बैठ गई थीं ! रूम-बॉय बिस्तर हटाने लगा था।

—ठीक है, अब मैं आराम करूंगी। जरा बिंदा को भेज दीजिएगा। मालती जी ने कहा और वे पानी का गिलास भरकर हाथ में पकड़े रहीं। उन्होंने एक क्षण के लिए सुराही को देखा था, फिर वे खिड़की के बाहर ताकती रहीं।

हम दोनों चले आए। नीचे से हमने बिंदा को भेज दिया। मैंने बिंदा

को समझा भी दिया कि मालती जी एकाएक कुछ डिस्टर्ब हो गई हैं और वह जाए तो बहुत समझदारी से काम ले। मेरी मुश्किल यह थी कि मैं लोगों से कह भी नहीं सकता था। पता नहीं, मालती जी पसंद करें या न करें···इस रिश्ते को जाहिर करना उन्हें उचित लगे या न लगे।

रात काफी गहरी हो गई थी। हम सात-आठ लोग चुनाव कार्यालय वाले कॉटेज में लेटे हुए थे। लल्लू बाबू ने अपनी वास्कट की जेब से खुराक लगी मिक्चर की शीशी निकाली थी, उसे हिलाया और एक खुराक पी गए थे।

—आपकी तबियत गड़बड़ है ? मैंने यूं ही पूछा था।

—हां, काफी गड़बड़ है ! लल्लू बाबू बोले थे।

—तो बताया होता, किसी डाक्टर को दिखा देते।

—चुनाव की फिक्र करें या इस तबियत की ! कहते हुए उन्होंने फिर शीशी उठाकर खुराक के निशान पर अंगूठा लगाया, हिलाया और एक खुराक और पी गए।

—बड़ी जल्दी-जल्दी दवा पी रहे हैं ! मैंने कहा तो करवट लेकर लेट गए और उसी तरफ मुंह किए-किए बोले—गुल्सरन जी, मेरे ख़याल से गांव के इलाकों में ज़रा ज़ोरदार तरीके से मजमा जमाइए !

—गांववाले अब मुश्किल से पकड़ में आते हैं।

—तो एक रामायणी पण्डित जी को पकड़िए। गांव के किसी असरदार आदमी के घर रामायण का पाठ रखवाइए···और उसी बहाने अपना काम कीजिए। शहर के लिए एक-एक मोहल्ले में एक-एक दिन नौटंकी और कव्वाली का प्रोग्राम आर्गनाइज़ कीजिए। ऐसे चुनाव नहीं लड़े जाते, जैसे आप लड़ रहे हैं ! लल्लू बाबू ने कहा।

—मालती जी पसंद करेंगी ? मैंने शक जाहिर किया।

—उनके पसंद करने या नापसंद करने से क्या होता है। यह सब उनसे पूछने की जरूरत भी नहीं है। कैण्डीडेट हार जाए तो सब गलत और बुरा होता है, जीत जाए तो सब सही और अच्छा ! हूं ! कहते हुए उन्होंने शीशी हिलाकर तीसरी और आखिरी खुराक भी पी ली। मैं समझ गया था कि यह दवा कैसी थी। तीसरी खुराक लेकर लल्लू बाबू खुर्राटे भरने लगे थे। मुझे नींद नहीं आ रही थी। रह-रहकर जग्गी बाबू का खयाल आ रहा था।

तभी बिंदा लौट आया था। आकर मेरे पास बैठ गया था।

पता चला कि मालती जी बहुत उदास थीं। उन्होंने बिंदा से पूछा था—तुमने पहचाना ?

—हां, मैं तो पिछली बार भी मिल गया था। लहसन की चटनी मालिक ने ही रखवाई थी। मेरी हिम्मत नहीं पड़ी कि आपसे कहता। बिंदा ने बताया था।

—लिली का कुछ पता है ? मालती जी ने डूबी आवाज में पूछा था।

—मालूम नहीं।

—जरा फोन मिला···

—कहां ?

—मैं···ने···ज···मेरा मतलब है···इन···वो लिली का जरा पता कर···

···मैनेजर साहब को फोन दीजिए ! बिंदा ने फोन मिलाकर आपरेटर से कहा था। जवाब मिला था···वे अपने फ्लैट में चले गए हैं, ड्यूटी पर नहीं हैं···कहिए तो वहां मिला दें, शायद आराम कर रहे होंगे।

—रहने दे ! मालती जी ने कहा था—तू भी जा, आराम कर।

—जी ! बिंदा ने कहा था, और वह मालती जी की बाकी जरूरत की चीजों को करीने से सजाने लगा था। मालती जी बिस्तर पर लेट गई थीं। बिंदा ने उनकी चप्पलें पैताने लगा दी थीं। छोटा तौलिया सिर-हाने रख दिया था। नेजल ड्राप्स की प्लास्टिक की शीशी तकिये के नीचे दबा दी थी। और फाइलें उधर कमरे में ले जाने लगा था, तो उसने देखा

था—मालती जी ने फोन का रिसीवर एकाएक झटके से उठाया था। और कान से लगा लिया था।

—कोई नम्बर चाहिए! फाइलें वहीं रखकर बिंदा लपककर पास आ गया था।]

—नहीं···घंटी बजी थी न?

—फोन की!

—फोन की···हां···मालती जी ने कहा था।

—मैंने तो नहीं सुनी···बिंदा बोला था।

—अच्छा! बुदबुदाते हुए मालती जी ने कहा था और रिसीवर रख दिया था और वे लस्त होकर लेट गई थीं।

मुझे नहीं मालूम, उस रात और क्या हुआ। मालती जी सो पाईं या जागती रहीं—जग्गी बाबू रात भर टैरेस पर टहलते रहे या जागते रहे—पर इतना तो जरूर लगा कि कहीं न कहीं उस रात छतरपुर का घर भी उभरा होगा···लिली भी दौड़ती आई होगी। खजुराहो का वह गुलाब बाग भी आया होगा···मंदिरों की छायाओं के तले से शायद दोनों साथ या अकेले-अकेले गुजरे होंगे। डूबते सूरज को उन्होंने अलग-अलग या साथ-साथ देखा होगा···और इलाके के पलाश-वन दहके होंगे।

मुझे वह सफर याद है, जब हम बेतवा पार करके आए थे। पाट बहुत चौड़ा तो नहीं था, पर बेतवा है तो खतरनाक। उस पार खड़े हम बड़ी नाव के आने का इंतजार कर रहे थे। हम एक मीटिंग से साथ लौटे थे। जग्गी बाबू भी थे। जीप से उतरकर हम पास की चाय की दुकान में चले गए थे। फागुन के दिन थे, पर फिर भी एक अधेड़ बैठा आल्हा गा रहा था···बेतवा की महिमा का प्रसंग था। बेतवा बाढ़ पर थी और ऊदल को

सेनाओं को पार जाना था···

कुछ जानवर भी झुण्ड में खड़े थे। गड़रिये उन्हें उस पार ले जाने के लिए रुके हुए थे।

आखिर उस पार से खेप लेकर बड़ी नाव आई थी। जीप, जानवर और हम सब लोग उसमें लद गए थे। उस पार उतरकर जब हमने सफ़र शुरू किया था तो पलाश-वन दहक रहे थे। पतले डामर के रास्ते पर पलाश के फूलों का लाल कालीन बिछा हुआ था। जीप उन्हें कच-कच कुचलती चली जा रही थी। मालती जी बोली थी—साढ़े पांच बज गया। चार बजे पहुंचना था। वे लोग इंतज़ार कर रहे होंगे!

—तो क्या हुआ···और इन्तज़ार कर लेंगे···आपको सब जगह की मीटिंगों के निमंत्रण स्वीकार नहीं करने चाहिए। आखिर कितनी मीटिंगें एड्रेस करेंगी? मैंने कहा था।

—क्या करें···ड्राइवर, ज़रा तेज़ चलाओ! मालती जी बोली थी।

—ड्राइवर, जीप रोको! एकाएक जग्गी बाबू बोले थे।

—क्यों? मालती जी ने कहा था।

—क्या हो गया!

···ये फूल कुचलते हैं तो मन में जाने कैसा-सा होता है···जग्गी बाबू सड़क पर कुचले फूलों को देखकर फूले हुए पलाश-वनों की ओर देखने लगे थे, और जीप से उतर गए थे।

—ए, देर मत करो प्लीज़! घड़ी देखकर मालती जी बोली थी—धीरे चलोगे तब भी फूल कुचले जाएंगे! आओ, जल्दी बैठो। सभा के लिए बहुत देर हो जाएगी···और मालती जी ने उन्हें बांह पकड़कर अपनी ओर खींचा था। जग्गी बाबू बेमन से फिर बैठ गए थे। जीप चल दी थी।

—एक दफ़ा तुम इलेक्शन हार जाओ तो ठीक रहे! जग्गी बाबू ने शैतानी से कहा था।

—फिर वही बात! मालती जी ने उन्हें प्यार-भरी टेढ़ी नज़रों से देखा था।

—और क्या! एक दफ़ा हार जाओ, तो तुम्हें कुछ वक्त मिलने लगेगा ···अपने लिए, मेरे लिए···सुनो, जीते हुए आदमी के पास वक्त बिलकुल

नही होता। हारे हुए के पास वक्त ही वक्त होता है ! क्यों, गलत कह रहा हूं गुल्सरन जी ! जग्गी बाबू ने मजाक को और फैंसाते हुए कहा था।

—सुन लिया गुल्सरन जी ? मालती जी ने मुड़कर पीछे देखते हुए कहा था···अपने घर में ही विरोधी बैठे हुए हैं ! पहले इन्हें पटाइए !

और पूरी बात एक हल्के मजाक के माहौल में घुल गई थी।

पर आज मुझे लग रहा था कि हार या जीत का एक और मैदान भी है। उसमे न वक्त है, न जरूरत और न जीत। उसमे सिर्फ हार ही हार है। दोनों हारते हैं एक-दूसरे से। एक भी जीत जाए तो सब बिखर जाता है। पता नहीं, मालती जी और जग्गी बाबू को क्या-क्या याद होगा ! इस रात उनमें से कौन जीता होगा ? या दोनों हारे होंगे···लेकिन राजनीति का यह नशा ! सफलता का नशा ! सफलता की दौड़ में कोई थकता नहीं···इस दौड़ का कोई पड़ाव या मंजिल होती नहीं···सफल व्यक्ति सिर्फ दौड़ता रह जाता है···और दौड़ना ही उसकी सफलता बन जाती है। क्योंकि दौड़ते-दौड़ते वह यह भूल जाता है कि उसने दौड़ना क्यों शुरू किया था। सफलता की मंजिल सिर्फ सफलता है ! राजनीति में जो सबसे बड़ा छल है वह यही है कि दौड़नेवाला हमेशा कहता है—हम तुम्हारे लिए दौड़ रहे हैं ! जबकि सही यह होता है कि खुद वह अपने लिए भी दौड़ नहीं रहा होता···कुछ इसी तरह की दौड़ मालती जी की रही है। और इस दौड़ का नुकसान भुगतता है वह दौर, जो सफलता की इस राजनीति की चपेट में आ जाता है। इतिहास की बड़ी-बड़ी सफलताओं के दौर असल में भयानक असफलताओं के दौर रहे हैं···

सुबह मेरी आंख फोन की घंटी से खुली। पता नहीं क्यों, एकाएक लगा, जग्गी बाबू का फोन होगा। लेकिन नहीं, वह नरसी सेठ का था···

नमस्ते ! कोई तकलीफ तो नहीं। देखिए, मालती जी की एक पार्टी आप अभी से तय कर लीजिए, मेरी तरफ से। एक धाम बुक कीजिए।

बिंद्रा उठकर गया था और लौट आया था। बताने लगा—अभी सो रही हैं।

सुनते ही लल्लू बाबू बोले—तब तो लड़ चुकी इलेक्शन ! साढ़े सात बज रहा है। और उम्मीदवार तो अब तक एक-एक मीटिंग एड्रेस कर चुके होंगे।

तभी एक और फोन आया—महिला मण्डल वाले सम्मान-सभा करना चाहते हैं ! मैंने लल्लू बाबू को बताया।

—अरे छोड़िए ! महिला मण्डल से हमें क्या लेना-देना। वक्त कहां है ? मना कीजिए ! फिर एकाएक कुछ सोचकर बोले—उनसे पूछिए, अगर पांच-सात महिला वालंटियर दे सकें तो दस मिनट के लिए चली आएंगी। कहिए, फोन पर तय नहीं होगा। कोई यहां चला आए।

तभी देखा, मालती जी कार्यालय की ओर चली आ रही हैं। हम सब सतर्क हो गए। आते ही बोलीं—गुरुसरन जी, इधर आइए।

हम दोनों एक तरफ हो गए। उन्होंने धीरे-से पूछा—लाला दीनानाथ का काम हो गया ?

—जी !

—हां, तो बताइए, मुझे क्या करना है ? या यों ही बुलाकर आप लोगों ने बैठा लिया है ? जल्दी-जल्दी बताइए। क्या प्रोग्राम है ? कहां-कहां जाना है ? कितनी सभाएं हैं ?—मालती जी अपनी रौ में थीं।

जगतसिंह ने डायरी खोलकर प्रोग्राम बताने शुरू किए। तब तक कुछ लोग और भी आ गए थे। भण्डारी जी ने चाय पेश कर दी थी। मालती जी ने मजाक किया—अब तो लुटने का अंदेशा नहीं है ?

भण्डारी जी कब मानने वाले थे। बोले—लुटवा तो उन्होंने दिया जो काम दूसरों का करते थे और रोटियां खाने हमारे यहां आ जाते थे··· गुरुसरन जी ने लंगर खुलवा दिया था।

जो लोग शहर से खबरें लेकर आए थे उनमें मिर्जा साहब भी थे। वे एक उम्मीदवार के बारे में कुछ अहम खबरें लेकर आए थे। उन्होंने फौरन

बताना शुरू किया—देखिए, अब आप सब संभालिए। नहीं तो यह इलेक्शनबाजी बहुत टेढ़ा रुख ले जाएगी। आपको मालूम ही है कि गुलशेर अहमद मैदान में मौजूद हैं। अभी तक वे अवध की बातें तो नहीं कर रहे थे, पर खतरनाक बातें भी नहीं कर रहे थे। लेकिन अब उनके इर्दगिर्द वे सब ताकतें जमा हो रही हैं, जो बुनियादी तौर पर कम्युनल हैं। वे जातियों में भेद पैदा करके वोटों को हिन्दू और मुसलमान वोटों में तकसीम कर देना चाहते हैं और चोरी-छुपे यह ऐलान भी कर रहे हैं कि भारत में इस्लाम खतरे में है। इसलिए जरूरी है कि मुसलमान अपने वोटों को मुसलमान के लिए इस्तेमाल करें। और उधर लाला दीनानाथ बिलकुल जाति के सहारे चल रहे हैं। वे बनियों को जमा कर रहे हैं। शहर में हजारों लोग बाहर से घुस पड़े हैं और यहां-वहां तनातनी का माहौल पैदा कर रहे हैं'''गुलशेर अहमद को तो किसी भी कीमत पर समझाया नहीं जा सकता, क्योंकि वो तास्सुबी हैं; लेकिन लाला दीनानाथ, जो इस शहर के जाने-माने समझदार आदमी हैं, उन्हें यह बुखार क्योंकर चढ़ गया है, यह समझ में नहीं आता।

मैंने मालती जी की ओर भेदभरी नजरों से देखा था। आखिर हमेशा की तरह उन्होंने अकाट बात कही—जिन रुझानों को हमें नेस्तनाबूद करना है, वे सामने और ऊपर निकलकर आ जाएं तो अच्छा ही है। जड़ से उखाड़ने के लिए पौधे को ऊपर से ही पकड़ना पड़ता है!

मिर्जा साहब खुशी से उछल पड़े—क्या बात कही है आपने! वल्लाह! आपको तो अदब के फील्ड में होना चाहिए था। जी चाहता है, आपकी हर बात लिखता जाऊं!

तभी बेयरा आ गया था—जी, नाश्ता लग गया है।

और मालती जी, मैं, मिर्जा साहब और लल्लू बाबू नाश्ते के लिए कमरे में पहुंचे थे। नाश्ता मेज पर नहीं, नीचे दस्तरखान पर लगा था। देखते ही मिर्जा साहब फिर चहक उठे—क्या बात है! इन होटलों में तो मेज-कुर्सी से आदमी नीचे नहीं उतरता'''यह नीचे बैठकर नाश्ते की बात खूब सूझी'''आपका ही हुक्म होगा यह?

—हुक्म तो खैर मेरा नहीं था, पर यों अरेंज हो गया। मुझे मेज-

कुर्सी पर बैठकर खाना अच्छा नही लगता ! मालती जी ने कहा था।

—सुना है, यहा के मैनेजर साहब आपके कोई करीबी रिश्तेदार हैं ! मिर्जा साहब ने कहा।

—आप पराठा पसंद करेंगे ? मैंने बात संभाली।

—अरे पराठा ! होटल के नाश्ते में ! कमाल है··· मैं तो साहब, बेगम से कहूगा, खाना खाना हो तो आदमी होटल में खाए और रहना हो तो ससुराल मे रहे। ये अपने घर का रहना और अपने ही घर का खाना बिलकुल बेहूदी चीज है ! अब तो होटल घर हो गए हैं, और घर होटल !···गलत कह रहा हूं ? वे बोले थे तो सब हंस दिए थे। मैं मालती जी की ओर देखकर चुप रह गया था।

—शाम को आपकी मीटिंग है मुहल्ले में, मिर्जा साहब ! मैंने फिर वातावरण को हल्का करने की कोशिश की।

—जी हां, मुझे पता है। हमें तैयारी भी करनी है। गुलशेर के लोग शायद कुछ बवाल खड़ा करने की कोशिश करेंगे। पर हमें किसका डर है, जो होगा, सुलट लेंगे। मालती जी ने कहा था।

और शाम को मीटिंग में मालती जी ने बहुत जोशीला भाषण दिया—

···तो भाइयो और बहनो ! मेरे कहने का मतलब सिर्फ यही है कि आप बड़े और खुले दिमाग से सोचें, दोस्त और दुश्मन में फर्क करें ! अगर हम हिंदू और मुसलमान की तरह सोचते रहे तो यह मुल्क गारत हो जाएगा। मैं गुलशेर साहब जैसे उम्मीदवारों के लिए क्या कहूं जो फिरकापरस्ती में यकीन करते हैं और लोगों के मजहबी जज्बों को भड़काकर अपना उल्लू सीधा करना चाहते हैं···मजहब बड़ी चीज है, पर हमारी सबसे बड़ी जरूरत है गरीबी और भूख को मिटाना ! (तालियां) पर दुःख होता है लाला दीनानाथ जैसे आदमी को इस रूप मे देखकर जो अपनी जाति का

झण्डा लेकर खड़े हुए हैं, जाति का भी नहीं, कास्ट का ! मैं पूछती हूं कि जाति प्रथा ने हमें क्या दिया है ? और फिर इसका अंत क्या है ? जातियों में भी उपजातियां हैं···सब बनिया नहीं हैं, बनियों में भी कुछ अग्रवाल हैं, कुछ गुप्ता हैं. कुछ और भी है···अगर कोई अग्रवालों के नाम पर खड़ा हो जाए तो क्या होगा ? तब गुप्ता कहां जाएंगे ? क्या गुप्ता और अग्रवालों की परेशानियां अलग-अलग हैं ? नहीं, बिलकुल नहीं ! यह खुशहाली की लड़ाई हिंदू और मुसलमान की अलग-अलग खानों में बंटी लड़ाई नहीं है। यह अग्रवालों, गुप्ताओं या ब्राह्मणों की अलग-अलग लड़ी जानेवाली लड़ाई नहीं है। यह मिली-जुली लड़ाई है और सबकी है। इसीलिए हमें साम्प्रदायिकता, फिरकापरस्ती और हर तरह के जातिवाद का विरोध करना है ! (तालियां) ···सुना है कि विरोधी उम्मीदवार चन्द्रसेन ने खुली सभा में मुझसे कोई सवाल पूछा था। मैं जवाब देने आई हूं और वे सुन लें। हमारे चुनाव कार्यालय में अनाज इकट्ठा नहीं किया गया··· जो थोड़ा-बहुत था भी, वह उन लोगों में बांटने के लिए था, जिन्हें कुछ नहीं मिल पाता। वह गरीबों के लिए था। उस अनाज को, उस अन्न को जलाकर चन्द्रसेन जी को क्या मिला ? नुकसान किसका हुआ ? ···गुण्डागर्दी से चुनाव नहीं जीते जाते···तो भाइयो और बहनो, हमें इन तरह-तरह के मौकापरस्त लोगों से आगाह रहना है और अपने वोट का सही इस्तेमाल करना है ! मैं नहीं कहती कि आप वोट मुझे दें···मेरा कहना सिर्फ इतना है कि जो आपको सबसे सही लगे, क्योंकि कमियां सबमें हैं, उसे ही आप अपना समर्थन दें ! जयहिंद !

बीच-बीच में तालियां बजती रहीं। मिर्जा साहब बहुत खुश हो रहे थे। सभा समाप्त हुई तो खुद मिर्जा साहब ने नारे लगाए—

मालती जी !

जिन्दाबाद !

मालती जी !

जिन्दाबाद !

संतोष की मुस्कराहट लिए मालती जी जगतसिंह की ओर देखने लगीं, जैसे पूछ रही हों—अब ?

जगतसिंह ने फौरन डायरी खोलकर देखा और बताया—अब ज़िला कमेटी की ओर से डिनर है !

—डिनर, कहां ?

—वहीं होटल में।

—कौन-कौन आ रहा है ?

—ज़िला कमेटी के लोग हैं। और कलक्टर साहब तथा टूरिस्ट अफ़सर साहब एक मिनट के लिए वहीं आपसे मिलना चाहते हैं।

—अच्छा, वहीं मिलवा दीजिएगा।

और हम सब लोग होटल लौट आए थे। हमें पहुंचने मे देर हुई थी। वहीं लाउंज में कलक्टर साहब और टूरिस्ट आफिसर को आराम से बैठाए जग्गी बाबू बातों मे उलझाए हुए थे। मालती जी के पहुंचते ही वे दोनों उठकर खड़े हो गए थे और जग्गी बाबू एक ओर सरक गए थे।

—कहिए कलक्टर साहब ? मालती जी ने पूछा—क्या हुक्म है ?

—जी, हुक्म का क्या सवाल—उन्होंने हाथ जोड़ते हुए कहा था—ये स्टेट टूरिस्ट डायरेक्टर हैं ! जी, आपको तो पता ही है कि विदेश से एम्पीज़ का एक डेलिगेशन आजकल आया हुआ है···

—हां-हां, आया हुआ है, पर यहां क्या जरूरत पड़ गई ?

—जी, वो डेलिगेशन इधर खजुराहो घूमने आया हुआ है। उन्हें पता चला कि इसी इलाके मे चुनाव होने जा रहे हैं। सो उन्होंने ख्वाहिश ज़ाहिर की है कि भारतीय चुनावों को देखने के लिए अगर वे एक दिन आपके साथ गुज़ार सकें···तो···टूरिस्ट डायरेक्टर ने हाथ मलते हुए बात अधूरी छोड़ दी।

—कब ?

—मुमकिन हो तो परसों। डायरेक्टर ने कहा।

मालती जी ने जगतसिंह की ओर देखा। जगतसिंह ने डायरी देखी। 'ठीक है' के अंदाज़ में सिर हिलाया। मालती जी ने कहा—ठीक है, ले आइए। फिर जगतसिंह से कहा—विदेशियों के लिए उसी शाम एक स्वागत पार्टी यहीं होटल में अरेंज कर दीजिए।

—इस मौके पर शहर के कुछ चुने हुए लोगों को भी बुला लिया जाए। लल्लू बाबू ने सुझाया।

—जी, वो हम कर लेंगे। कलक्टर साहब ने कहा।

—नहीं, नहीं, औरों का झंझट मत लगाइए···मालती जी ने कहा।

—जी, ठीक है! कलक्टर ने कहा, फिर मालती जी के गले की भारी आवाज़ मार्क करते हुए बोला···आपको शायद सर्दी लग गई है।

मालती जी ने बात को अनसुना करते हुए मेरी ओर देखा, और कहा—ठीक है, तो मैं जाऊं।

—जी, वो जिला कमेटी वालों का डिनर···जगतसिंह ने कहा।

—हाथ-मुंह भी नहीं धोने देंगे क्या? मालती जी ने जैसे उलाहना दिया—मैं दस मिनट में आती हूं। सब तैयार है? कहती हुई वे लिफ्ट की ओर चली गईं।

बड़ा टेढ़ा इंतज़ाम था। जिला कमेटी के सदस्यों की अलग-अलग ज़रूरतें थीं। एक साहब को मूंग की दाल चाहिए थी। दूसरे को लौकी की सब्ज़ी। तीसरे को बिना नमक का खाना···जैसे ही मालती जी ऊपर गईं, जगतसिंह लपककर जग्गी बाबू के पास पहुंचा और दरयाफ्त करने लगा—सब चौकस है न! एक साहब को मूंग की दाल ज़रूर चाहिए··· और दूसरे को पूरा खाना बिना नमक का चाहिए···तीसरे को···

—आप बेफिक्र रहिए। सब इंतज़ाम हो गया है! जग्गी बाबू ने कहा और कौन कहां बैठेगा, उसके हिसाब से बेयरों को अलग-अलग ज़रूरत का खाना परोसने के लिए समझा दिया था।

और हम लोग उस कमरे में पहुंच गए जहां डिनर का इन्तज़ाम था। सब कुछ चौकस लगा हुआ था। साइड रूम में बेयरे हमलावर फौजियों की तरह तैनात थे। तभी एकाएक जग्गी बाबू ने मेज़ की ओर देखा और बगल वाले कमरे से जाकर खुद ही एक फ्लावर पाट उठा लाए और उसे उन्होंने बीच में रख दिया। और मैंने देखा था—जग्गी बाबू ने सबकी आंख बचाकर पीले गुलाब की एक कली फुल प्लेट और क्वार्टर प्लेट के बीच में रख दी थी, उस सीट पर जहां मालती जी बैठने वाली थीं।

खाना शुरू हुआ। मालती जी आईं। नेपकिन उठाते हुए उन्होंने पीले गुलाब की कली को देखा था। एक क्षण के लिए उनका हाथ रुका था। उनकी आंखों ने एकाएक शून्य में कुछ देखा था कि तभी बेयरा सर्विस लेकर उनके बाईं ओर आ खड़ा हुआ था। सब्जी परस लेने के बाद उन्होंने कली को प्लेट की किनारी के नीचे सरका दिया था।

खाना शुरू हुआ तो जिला कमेटी के मूंग की दाल वाले, गंजी चांद वाले सदस्य ने हांक लगाई—अरे, दाल नहीं है क्या ?

बेयरा दाल का डोंगा लेकर दौड़ पड़ा। दाल परस गई तो उन्होंने ही फिर आवाज लगाई—अरे, घी नहीं है क्या ?

मैंने उन्हें गौर से देखा। शायद वे सख्त नजर से ही कुछ समझ जाएं, पर उनपर कोई असर नहीं हुआ। वे कुल सात सदस्य थे। सबके-सब निहायत उजड्ड। धूल से सने हुए और अपने गरूर में मस्त। लेकिन ऐसे लोगों को भी साधना पड़ता है। मालती जी का रवैया हम सभी देख रहे थे। सबकी जेब में दस-दस, पांच-पांच हजार वोट पड़े हुए थे।

उन्हीं सदस्य ने टोपी उतारी, अपनी गंजी चांद खुजलाई और फिर गुहार लगाई—अरे, घी नहीं है क्या ?

जग्गी बाबू जब तक दौड़कर आएं, मैंने उनसे कहा—यह मक्खन डाल लीजिए…

—पिघला हुआ हो तो ठीक रहे ! उन्होंने कहा और जग्गी बाबू ने फौरन एक बेयरे को हुक्म दिया कि मक्खन गर्म करवा के ले आए, गर्म होकर मक्खन आए तब तक जग्गी बाबू ने उन्हें संभालने के लिए कहा—अभी आ रहा है…एक मिनट।

बेयरा पिघला मक्खन ले आया तो जग्गी बाबू ने खुद ही उनकी दाल में मक्खन डाल दिया। उन्होंने हाथ रोका तो गंजे बाबू बोले—एक चम्मच और डाल दीजिए न…

पिघले मक्खन का बाउल मेज पर रखकर जग्गी बाबू एक ओर खड़े हो गए। वे समझ गए थे कि काफी मुश्किल किस्म के राजनीतिक जंतु आए हुए हैं।

अभी एक सदस्य कह ही रहे थे कि इस बरस सूखे के कारण किसान परेशान और बेहाल रहा है कि उन्हीं गंजे बाबू ने दाल का कौर खाकर मुंह बिगाड़ा—अरे, यह क्या है भाई ? चढ़े मुंह से उन्होंने जग्गी बाबू को देखा—अरे, आपके इतने बड़े होटल में दाल भी ठीक से नहीं बन सकती क्या ?

—जी, क्या हुआ ? जग्गी बाबू ने झुककर दरयाफ्त किया ।

—यहां के आप मैनेजर बाबू हैं न···इसे खाकर देखिए न ! गंजी चांद वाले ने कहा, और दाल का चम्मच उनके मुंह की ओर बढ़ाया। जग्गी बाबू सकते में आ गए !

—जी···

—जी, क्या ! इसे खाइए न ! वे बहुत भद्दे तरीके से बोले ।

—जी, आप बता दीजिए···जग्गी बाबू ने अपने गुस्से और अपमान को पीते हुए कहा ।

—मैं कहता हूं, इसे खाइए न ! उन्होंने फिर जिद की ।

मालती जी ने उधर देखा और टालने की तरह वे निर्लिप्त हो गईं । जग्गी बाबू ने मालती जी को एक पल घूरा और बोले—जी, जो कमी हो, बता दीजिए···

—इसमें नमक नहीं है ! वे बिफरकर बोले । तब तक दूसरे सदस्य ने बात संभालने की कोशिश की—तो नमक डाल लीजिए न !

—बेयरा ! जग्गी बाबू ने अपमान से सुलगते और खून का घूंट पीते हुए कहा—साहब की दाल में नमक डाल दो ! और वे तेजी से वहां से निकल गए ।

—अजीब होटल है, भाई ! गंजी चांदवाले बुदबुदा रहे थे—यहां न दाल में नमक पड़ता है, न घी ! हुं···और ऊपर से गलती भी नहीं मानते !

—गलती किसीकी नहीं है ! दूसरे सदस्य ने कहा—हमने भी मूंग की दाल के लिए बोला था चौधरी···हमने इधर नमक छोड़ा हुआ है ।

—अरे, तो हमारी दाल में नमक तो होना चाहिए न ! गंजी चांद-वाले अपनी रट लगाए हुए थे ।

—दाल तो एक ही बनेगी न ! दूसरे सदस्य ने बहुत समझाने की कोशिश की।

आखिर लल्लू बाबू ने बात बदली—उस बात को छोड़िए न चौधरी साहब···यह बताइए, गांवों में बहुत झक मारनी पड़ेगी या कम···

मालती जी भी कुछ अटपटा महसूस करने लगी थीं। सारा माहौल बिगड़-सा गया था। खास तौर से मेरे और मालती जी के लिए। ऐसे नाजुक मौके पर कुछ कहा भी नहीं जा सकता था। मैं उठकर भी नहीं जा सकता था। फिर यह भी पता नहीं था कि मालती जी मेरा उठकर जाना पसंद करेंगी या नहीं। शायद नहीं, क्योंकि जिला कमेटी के सातों सदस्य अपनी-अपनी तरह से बहुत महत्त्वपूर्ण थे—कम-से-कम तब तक, जब तक चुनाव चलने थे। इस तरह के निहायत उजड्ड और खुरदरे लोगों को भी संभालना पड़ता है। ये लोग गांव के कहलाते हैं, पर गांव के रह नहीं गए हैं। कहीं-कहीं तो यह शहर वालों से भी ज्यादा चालाक और मौकापरस्त हो गए हैं। मौके पर क्या ,गिरफ्त होनी चाहिए, इसके माहिर ! सिर्फ माहिर ही नहीं, बल्कि मगरूर और दुर्मुख भी···सौ फीसदी घाघ ! पर हमें तो निभाना था। घुल गए विष के बावजूद लल्लू बाबू अपनी रौ में थे। उन्होंने फिर अपना सवाल दोहराया—हां, तो चौधरी साहब, आपने बताया नहीं, गांव का मोर्चा संभालने के लिए क्या-क्या करना होगा ?

गंजी चांद वाले अब खाने में मशगूल थे। एक सुलझे हुए सदस्य ने बात का छोर पकड़ा। बोले—अब गांवों में हाल बहुत बदल गया है। छोटी-छोटी पार्टियों और गैरजिम्मेदार नेताओं ने माहौल बिगाड़ दिया है। इन्हीं लोगों की वजह से अब गांव वाले किसी पर यकीन नहीं करते।

—जी, और चालाक भी हो गए हैं। दूसरे ने कहा।

—मैं यह नहीं मानती ! मालती जी बोलीं—मेरा अनुभव है कि हमारे ग्रामीण अब भी उतने ही भोले हैं। गैरजिम्मेदार नेताओं से वे जरूर परहेज करते हैं।

—आपकी बात दूसरी है ! तीसरे सदस्य ने मस्का लगाया—लेकिन

अब वे किसी की सुनते नहीं। चुनाव के दौरान तो और भी नहीं।

—हरी मिरच नहीं है क्या ? उन्हीं गंजे बाबू ने गुहार लगाई। बैरे ने मेज पर से सलाद की प्लेट उठाकर उनके सामने कर दी। उन्होंने मिर्च उठाकर कुतरी और सू-सू करने लगे —बहुत कड़वी है भई···फिर इधर-उधर देखकर बोले—अरे, थोड़ी कम कड़वी हरी मिर्च नहीं है क्या ?

—अजी, गांव के लोग बहुत बदल गए हैं ! लल्लू बाबू ने तपाक से कहा—और गांव के ही क्या, शहरों में देख लीजिए ! मीटिंग कीजिए तो हजार नखरे करते हैं। वोट देते हैं तो लगता है अहसान कर रहे हैं···

—आप ठीक कह रहे हैं ! चौथे सदस्य ने कहा।

—भैये ! कथा करवाइए, रामायण-पाठ करवाइए तो फौरन आ जाएंगे ! लल्लू बाबू ने अपना पुराना राग पकड़ा—इससे अच्छा प्रचार का साधन और है भी नहीं। क्यों भण्डारी रामनारायण जी ? गांव के इलाकों के लिए एक रामायण बांचने वाले पण्डित जी का इन्तजाम हो सकता है ?

—देखेंगे ! भण्डारी ने कहा।

—और मिर्जा साहब शहर की सभाओं के लिए कव्वालों का इंतजाम हो जाए तो रंग ही जम जाए ! लल्लू बाबू और उत्साहित हो गए।

—क्या बात करते हैं आप ! मालती जी ने झिड़का—आपको भी अजीब-अजीब बातें सूझती हैं ! इतना सुनते ही लल्लू बाबू पर पानी पड़ गया।

खाना खत्म हुआ तो सभी लोग अपनी-अपनी स्कीमें बताते हुए चलने लगे। जिला कमेटी के दो सदस्यों ने अपने इलाके में मीटिंग का दिन और समय तय किया। मैं मालती जी को गौर से देखता रहा। जग्गी बाबू बातों के दौरान कुछ देर दरवाजे के पास खड़े रहे थे। फिर जब खाना समाप्त होने लगा तो वे चुपचाप चले गए थे। उन्होंने शायद यह मार्क किया था कि मालती जी की आवाज बैठ गई है। चलते-चलते मालती जी ने पीले गुलाब की कली हथेली में दबा ली थी···यह मैंने देखा था और मुझे यह अच्छा भी लगा था।

नमस्ते-नमस्ते होती रही और काउंटर के पास से होती हुई मालती जी जब लिफ्ट की ओर चली गईं तो जग्गी बाबू ने इशारे से मुझे बुलाकर कहा — नमक के गरारे करवा दीजिए। नहीं तो गला एकदम बैठ जाएगा। ...यहां का पानी भारी है। रात में गले में कुछ लपेट लें या सेक लें तो ठीक रहेगा।

तभी चिंदा आया और मुझसे बोला—आपको बुला रही हैं!

और मैं ऊपर पहुंचा। मालती जी शाम के प्रोग्राम से बहुत सन्तुष्ट थीं।

बोली—ठीक रहा!

—बेहद! मैंने कहा।

—मिर्जा साहब सब संभाल पाएंगे...गुलशेर के मुकाबले! वे बोलीं।

—लगता तो है...

—मेरे खयाल से लल्लू बाबू जो कह रहे थे, उसका इन्तजाम करवा दीजिए...

—वो रामायण पाठ वाला?...आपके रुख से उस वक्त तो लल्लू बाबू सहम-से गए थे...मैंने कहा।

—तो यह सब उन्हें सबके बीच कहना चाहिए? ये सब काम तो आप लोगों को अपनी सूझ-बूझ से करने चाहिए...जैसी जरूरत हो, जैसा वक्त हो...मैं कहूंगी कि लोगों को जमा करने के लिए रामायण पाठ करवाया जाए? वैसे इधर गांव के लोगों ने राजनीति की परवाह करना जरा कम कर दिया है, इसलिए यह जरिया बुरा नहीं है। मकसद उन्हें जमा करना है...जरूरत की बात है! मालती जी ने कहा तो मैं उनकी इच्छा समझ गया था। सवाल यह नहीं था कि वे क्या चाहती थीं, सवाल यह था कि वे 'कैसे' चाहती थीं।

उनकी बातों में 'जरूरत' और 'वक्त' शब्द फिर आ गए थे। और मैं

समझ गया कि अब इस वक्त वे राजनीतिक हो रही हैं। उनकी बातों में 'जरूरत', 'वक्त' और 'जीत' शब्द तभी आते थे, जब वे अपने पूरे राजनीतिक रूप में होती थीं।

मैंने धीरे से कहा—आपका गला भारी पड़ गया है। नमक के गरारे कर लीजिए—सिकाई करके गले को लपेटे रहिए तो सुबह तक आराम हो जाएगा।

—यह पुराना नुस्खा आपको खूब याद आया !···देख रही हूं, यहां मेरी देखभाल कुछ ज्यादा हो रही है···मालती जी ने गहरी नजरों से देखा···वे ताड़ गई थीं कि यह नुस्खा मेरा नहीं है।

—जी···जी·· वो जग्गी बाबू ने ··मैं हकलाने लगा था।

—मैं भी यही कह रही थी ··बेअक्ल तो नहीं हूं। कहते हुए वे अपना नाखून कुतरने लगी थीं और एक गहरी सांस लेकर खिड़की की ओर मुंह करके खड़ी हो गई थीं।

यह क्षण बहुत भारी था। मैं समझ नहीं पा रहा था कि क्या करूं··· और कुछ न समझकर मैंने अचकचाते हुए इतना ही कहा था—तो···मैं जाऊं···

—नहीं, उन्हें यहां बुलाइए ! मालती जी की आवाज सपाट थी—इस सिलसिले को सुलझा लेना ही बेहतर है ··उसी सपाट आवाज में बोलते-बोलते उनका स्वर कुछ पिघला हुआ हो आया था—आप तो सब जानते हैं गुरुसरन जी···मेरे पास इतना वक्त नहीं है कि इस तरह की बातों में अब पड़ सकूं···मैं यहां आई हूं चुनावों के लिए···

—यह तो एक इत्तफाक की बात है ! मैंने जैसे-तैसे कहा था।

—जो भी सही···पर हर वक्त मैं इसे इत्तफाक नहीं बने रहने देना चाहती। मुझे जरूरत नहीं है कि कोई मेरा इस तरह खयाल रखे···मेरी जिंदगी की जरूरत यह नहीं है···मालती जी ने कहा तो मुझे कुछ बुरा लगा। आखिर यह सब मुझसे कहने की जरूरत क्या थी। बहुत ताकत बटोरकर मैंने कह ही दिया—बेहतर हो, ये बातें आप जग्गी बाबू से करें। कहें तो फोन करके बुला दूं।

—बुलाइए !

मैंने फोन किया—जग्गीबाबू, एक मिनट के लिए कमरे मे आ जाइए।

वे फौरन आ गए। वे जब आए तब मालती जी बिस्तर पर बैंठी हुई थीं। एकाएक वे उठकर खड़ी हो गईं। जग्गी बाबू की नजर उनकी ऊंची-ऊंची पहनी साड़ी पर पड़ी, तो उन्होंने उसे जल्दी से ठीक कर लिया। आंचल को कायदे से कंधे तक लपेट लिया और बालों की लटों को भीतर समेट लिया। शायद सबसे भारी क्षण यही था। मालती जी की उंगलियां कांप रही थीं और वे अपनी सोने की चूड़ियों को कलाई पर ऊपर-नीचे करती रही थीं। मेरा हलक सूख रहा था। उस तकलीफदेह खामोशी को मैंने ही तोड़ा—आप बैठिए···

जग्गी बाबू जब मालती जी की ओर देखते बैंठ गए, तो बहुत सिमटकर मालती जी भी कुर्सी मे बैंठ गईं। अब मेरी समझ मे फिर कुछ नहीं आ रहा था। आखिर जग्गी बाबू ने ही उस क्षण भर मे जम गई बर्फ की चट्टान को तोड़ा—होटल मे कोई तकलीफ ? कोई शिकायत ? मुझे उम्मीद है, आप लोग आराम से हैं !

—मैं कुछ और बात करना चाहती थी···मालती जी ने कहीं और देखते हुए कहा।

—जी, कहिए ! जग्गी बाबू की आवाज एक-सी थी।

—अगर इजाजत दें तो मैं···मैं चलने के लिए उठ खड़ा हुआ था।

—आप रुकिए···मालती जी ने कहा, और मैं पत्थर की मूरत की तरह फिर बैंठ गया। पास रखे पानी के गिलास से एक घूंट लेकर वे बोलीं—आप जानते ही हैं कि मेरे-आपके रास्ते अलग हो चुके हैं !

जग्गी बाबू ने उन्हें बहुत गौर से देखते हुए कहा—जी, और शायद आप भी यह अच्छी तरह जानती हैं कि मेरे-आपके रास्ते अलग हो चुके हैं।

—यह इत्तफाक की बात है कि हम यहां मिल गए हैं !

—जी, यह महज इत्तफाक की ही बात है कि हम यहां मिल गए हैं ! जग्गी बाबू की आवाज एकदम साफ थी।

—यह मजबूरी थी कि मैं इस होटल में ठहरी।

—जी, और इस होटल की मजबूरी यह है कि मैं इसका मैनेजर हूं !

इस होटल और आपकी इस मजबूरी में मैं क्या मदद कर सकता हूं ? जग्गी बाबू ने बात को समझकर खोलना चाहा था।

—मदद मुझे नहीं चाहिए ! मालती जी ने हल्के स्वर में कहा।

—तो आपके खयाल से मैं किसी मदद के लिए इस वक्त आया हूं !

—मेरा मतलब यह नहीं था···

—बेहतर हो आप बता दें कि आपने किस जरूरत से इस वक्त मुझे बुलाया है···शायद मैं बेहतर जानता हूं कि जरूरत के बगैर आपके लिए कोई जरूरी नहीं होता, और वक्त की अहमियत के बगैर बेवक्त आप किसी को बुलाती नहीं !

—आप इल्जाम ही लगाते जाएंगे ? मालती जी ने कहा था।

—यह आप मुझसे कह रही हैं, जबकि मैं जानता हूं कि इस वक्त भी किसी इल्जाम के तहत ही मुझे बुलाया गया होगा ! जग्गी बाबू ने कहा और वे हथेलियां मलते हुए उठ खड़े हुए।

उनके खड़े होते ही मालती जी भी बैठी नहीं रह सकीं। खड़े होते हुए बोलीं—मैं चाहती हूं कि···

—आपके चाहने के मुताबिक मैंने हर काम किया है। जो-जो आप चाहती गई हैं, वह-वह होता गया है ! वे बोले थे।

—कि···मेरा और आपका रिश्ता···यहां के लोगों···

—ओह समझा ! यहां के लोगों को न मालूम पड़े ! हूं···मेरा और आपका कोई रिश्ता है क्या ? मैंने तो लिली तक को कभी इस रिश्ते के बारे में नहीं बताया···क्या आप समझती हैं कि जो बाप अपनी बच्ची से एक टूटे हुए रिश्ते के बारे में छुपाता रहा है, वह औरों को बताता फिरेगा ?

मालती जी ने बहुत गहरी सांस ली थी और बाथरूम का नॉब दबाकर वे भीतर गुसलखाने में चली गई थीं। जग्गी बाबू परेशान और नाराज-से कमरे में चहलकदमी करते रहे थे और बार-बार बाथरूम के दरवाजे की ओर देखते रहे थे। एक मिनट बाद मालती जी छोटे तौलिये से भीगा मुंह पोंछती निकल आई थीं। उनकी आंखों में आंसू अभी भी सूखे नहीं थे।

जग्गी बाबू ज्यादा ही भरे हुए थे। एक क्षण वे मालती जी को देखते रहे। जब पलकें झपका-झपकाकर मालती जी ने अपनी आंखें कुछ सुखा ली तो बहुत गहरी सांस लेकर जग्गी बाबू बोले थे—देखो मालती, मेरी बात का बुरा मत मानना···तुमने हमेशा वह सब लिया है, जो चाहा है ! जो तुम्हें सीधे-सीधे मांगने से नहीं मिला वह तुमने प्यार से हासिल किया; जो प्यार से नहीं मिला, वह तुमने जिद से लिया; जो जिद से नहीं मिला, उसे तुमने हक से लेना चाहा; और जहां तुम हक से कुछ हासिल नहीं कर पाईं, वहां तुमने आंसुओं से सब-कुछ पाना चाहा···! प्यार, जिद, हक और आंसू···ये सब मिलकर भी जो तुम्हें नहीं दे पाएंगे, वह भी मैं तुम्हें दूंगा ! बेफिक्र रहो···जो रिश्ता कभी था, उसे जो लोग जानते होंगे, वे कम से कम मेरी तरफ से नहीं जान पाएंगे, यह मैं कर सकता हूं···और यही करूंगा।

—शायद आप गलत समझ रहे हैं। कुछ झिझककर मालती जी ने कहा था।

बहुत रूखी और तकलीफदेह हंसी के बाद जग्गी बाबू ने कहा था—जब-जब तुमने कहा है कि मैं तुम्हें गलत समझ रहा हूं, सिर्फ तभी मैंने तुम्हें ठीक-ठीक समझा है ··तुम कब क्या चाहती हो, यह तो शायद मेरे सिवा कुछ और लोग भी समझ सकते हैं, पर तुम जो चाहती हो, उसे कैसे चाहती हो, सिर्फ मैं ही समझ सकता हूं ! ·· जग्गी बाबू ने बोलकर गहरी सांस ली थी।

मालती जी ने पूरी भरी नजरों से जग्गी बाबू को देखा था।

जग्गी बाबू ने अब कुछ सहज होकर कहा था—तुम परेशान मत होओ। तुम बहुत बड़ी लीडर हो। मुझे मालूम है। मैं इस होटल का मैनेजर हूं। यह तुम्हें मालूम है ! तुम्हें चुनाव जीतना है। मुझे अपना होटल चलाना है। फिर एक क्षण रुककर, जैसे कोई सख्त चीज निगलकर वे बोले थे—आप यहां ठहरी हैं···मेरा और आपका रिश्ता सिर्फ मैनेजर और मेहमान का है, सिर्फ मैनेजर और मेहमान का !···अण्डरस्टैण्ड !···गुड नाइट, मैडम !

और जग्गी बाबू तेजी से दरवाजा खोलकर बाहर निकल गए थे।

गलियारे में उनके दूर जाते हुए कदमों की आहट काफी देर तक आती रही थी।

मुझे अंदाज था कि मालती जी इस घटना के बाद दुखी होंगी, पर ऐसा नहीं हुआ। वे शांत थीं। ऐसा नहीं कि उनके आंसू झूठे थे या उन्हें पीड़ा नहीं हुई थी···पर इतना ही था कि सहना भी उन्हें आता था और पाना भी। क्या सहकर क्या पाना है, यह वह शायद अंदाज लगा लेती थीं। हम-आप जैसे लोग सहने और पाने का संतुलन नहीं बना पाते। या तो हमें लगता है कि हमने बहुत सहा है और बहुत कम पाया है या कि हमने सहा तो कुछ भी नहीं, खोया बहुत ज्यादा है। मालती जी की विशेषता यही है कि उनमें सहने, खाने और पाने का एक विचित्र संतुलन बना रहता है। ऐसा नहीं था कि लिली की उन्हें याद न आई हो या जग्गी बाबू के आने पर वे डावांडोल न हुई हों—पर उस वक्त जो कुछ उन्होंने सहा या खोया, उसके मुकाबले उन्होंने क्या पाया, यह वे अच्छी तरह जान रही थीं···और यह जानना भी उनकी सफलता का एक अहम जरिया था।

मैं खुद अंदाज नहीं लगा पाता कि वह रात भी कैसी गुजरी होगी, क्योंकि जग्गी बाबू के जाने के बाद उन्होंने कोई बात नहीं की। इतना ही कहा—आप भी जाइए, आराम कीजिए···और बिंदा को भेज दीजिए।

दो-तीन दिन काम काफी उखड़ा-उखड़ा चलता रहा। लल्लू बाबू शहर के चुनाव कार्यालयों का दौरा करते रहे। शहर में तनाव है, ये खबरें तो काफी पहले से आती रही थीं। मिर्जा साहब आए तो और बातें मालूम पड़ीं। यही कि कुछ लोग खास तौर से बाहर से बुलाए गए हैं ताकि मौका पड़ने पर दंगा-फसाद खड़ा कर सकें। मालती जी जरा जल्दी

में थी, उन्हें छात्रों की एक सभा में बोलने जाना था, इसलिए हम लोग उनके कमरे से बात-बात करते नीचे उतर आए थे। मिर्ज़ा साहब भी साथ ही थे। ड्राइवर न जाने कहां चला गया था, जब तक बिंदा ड्राइवर को खोजकर लाए, हम काउंटर के पास ही खड़े रहे। काउंटर के उस पार जग्गी बाबू अपने असिस्टेंट को कुछ समझा रहे थे। मिर्ज़ा साहब ने मालती जी को यों तो सब बता दिया था, पर चलते-चलते फिर आग्रह किया—अगर दंगा हो गया तो गजब हो जाएगा·· हालत ऐसी है कि किसी भी वक्त झगड़ा हो सकता है···कहते हुए उन्होंने अपना गिलौरीदान निकाला और मालती जी को पान पेश किया।

पान देखकर मालती जी खिल उठीं—यह वही घरवाला पान है ?

—जी, बेगम के हाथ के है ! मिर्ज़ा साहब ने कहा।

—बेगम साहिबा बहुत बढ़िया पान लगाती है···मज़ा आ जाता है···गुरुसरन जी, आज आप भी एक खाइए ! कहते हुए उन्होंने गिलौरीदान से दो पान उठाकर मुंह में रखे। तब तक मिर्ज़ा साहब ने तम्बाकू की डिबिया बढ़ा दी असली ज़र्दा···ज़ाफ़रानी···जो आपने उस दिन बोला था।

—अरे, यह ज़र्दा आपने मंगवा भी लिया।

—एक दुकान है यहां, सिर्फ उसीके यहां मिलता है। अपने काम पर अपनी पीठ ठोंकते हुए मिर्ज़ा साहब ने बताया।

—वाह ! वाह ! कहते हुए मालती जी ने चुटकी भरी।

काउंटर के उस तरफ से जग्गी बाबू की नजरें अकस्मात् मालती जी की ओर उठीं···मालती जी ने भी शायद उस तरफ देखा था और उनकी चुटकी ज़र्दा दबाए हुए उसी तरह चिपकी रह गई थी···शायद एक सहज संकोच के कारण।

मुझे याद है, जब बहुत पहले एक बार मालती जी ने ज़र्दा खाया था तो जग्गी बाबू ने कहा था—ज़र्दे की महक मुझे अच्छी नहीं लगती। खुदा के लिए ज़र्दा खाने की आदत मत डालो···

मेरा ध्यान उनकी चुटकी की ओर ही लगा रहा था और मैंने देखा था, जब वे कार में बैठी थीं, तो उन्होंने चुटकी खोलकर ज़र्दे को गिरा

दिया था, और मुझसे कहा था—गुरुसरन जी, आप भी इसीमें आ जाइए। रास्ते में उतर जाइएगा। जरा पुराने बाजार एरिया की आब-हवा तो पता लगाइए। पूरी रिपोर्ट लाइए!

कार ने मुझे आधे रास्ते छोड़ दिया था। मैं उधर से घूमता-घामता पुराना बाजार एरिया पहुंचा था। तनाव सचमुच था। वह इलाका भी ऐसा ही था। नानबाइयों की दुकानें और मामूली काम करने वालों के धंधे। बे-पढ़े-लिखे लोगों का इलाका। यही—दर्जी, ताले और छाते बनानेवाले। चमड़े का काम करनेवाले, वगैरह। वहां के लोगों से मैंने हालत दरयाफ्त की। मालूम हुआ कि यों तो सब शांत दिखाई देता है पर जब जुलूस निकलते हैं तो तनाव बढ़ जाता है। जुलूस में हमेशा कुछ चेहरे ऐसे नज़र आते हैं जो इलाके वालों के पहचाने हुए नहीं हैं। पता नहीं, ये लोग कहां से आए हैं।

मैंने सोचा, थानेदार को आगाह करता जाऊं। एकाध कांस्टेबुल अगर पोस्ट कर दिया जाए तो काफी होगा। जगह-जगह लगे झण्डों और दीवारों पर चिपके पोस्टरों से लग रहा था कि इस इलाके में गुलशेर अहमद का काफी ज़ोर है। हमारे दफ्तर पर कुत्ते मूत रहे थे। एक बुज़ुर्ग मियां टीन की कुरसी पर बैठे अखबार पढ़ रहे थे। ये भी हमारे सपोर्टर नहीं थे, इन्हें रोज़नदारी पर पर्चियां वगैरह बनाने के लिए भर्ती किया गया था। दरयाफ्त किया तो बूढ़े मियां जी ने बताया—कल शाम कुछ हुड़दंगा हुआ था, सो डर के मारे चारों कारकुन अपने-अपने घर भाग गए हैं। कौन लौटकर आएगा, कौन नहीं, कुछ पता नहीं है।

—मुझे दो दिन के पैसे भी नहीं मिले हैं। मियां जी ने कहा।

—जब काम ही नहीं हो रहा है तो पैसे कैसे? मैंने कहा।

—यह खूब रही! मैंने ईमानदारी से सिर्फ आपकी तरफ का काम करा। इसका नतीजा यह कि मेरे पैसे भी गोल! जो दोनों तरफ का काम करते हैं, वे ही मज़े में हैं। आपसे भी पैसा पाते हैं और उनसे भी।... मियां जी ने ज़रा नाखुशी से बात कही—मैं दो दिन से इंतज़ार कर रहा हूं। रोटी तक खरीदने के लिए पैसे नहीं हैं। पूछिए रामबरन से, अठन्नी

उधार लेकर कल शाम की रोटी खाई थी···

—आपके पैसे आपको मिल जाएंगे···पर ये दोनों तरफ का काम···

—जी, और क्या ? छुट्टन और बद्री—दोनों गुलशेर साहब की पर्चियां भी बांटते हैं और आपकी भी ? किसी को इससे क्या लेना-देना कि कौन जीतता है, कौन हारता है। हमें आपकी सियासत से क्या ? हमें तो काम चाहिए कि चार पैसे मिलते रहें और पेट भरता रहे। मेरा तो जिस्म नहीं चलता, नहीं तो मैं गुलशेर साहब का काम उठा लेता···मैंने बूढ़े मियां के हाथ पर पांच रुपये रखे तो उन्होंने कहा—टूटा रुपया तो मेरे पास नहीं है। दो दिन के चार रुपये हुए !

—रखिए···रखिए···कहता हुआ मैं मेन बाजार का हाल लेने चला गया।

खबर अच्छी नहीं है, यह मैंने लौटते ही मालती जी को बता दिया था। शहर के अखबारों में भी पिछले दिनों से छिटपुट गाली-गलौज और मारपीट की वारदातों की खबरें आ रही थीं, जो चुनाव की सरगर्मियों का तापमान बताती थीं। लल्लू बाबू बराबर शहर का दौरा करते रहे और चौथे दिन सुबह से ही बुरी खबरें आने लगीं। पुराने बाजार एरिया में जमकर मारपीट हो गई थी। पांच-सात लोग घायल भी हो गए थे। लोगों का कहना था कि मिर्जा साहब के मुहल्ले में मालती जी की जो शानदार मीटिंग हुई थी, उसके बाद गुलशेर अहमद के पैर-तले की जमीन खिसक गई थी। इसलिए वह इन हरकतों पर आमादा था। हम सब परेशान बैठे हुए थे। कुछ समझ में नहीं आ रहा था। लल्लू बाबू मालती जी के पास गए हुए थे। मैं भी चुनाव कार्यालय से निकलकर मालती जी के कमरे की ओर चला तो गेट के पास जग्गी बाबू मिल गए। उन्होंने मजाक में ही पूछा—कहिए गुरूसरन जी, आपके वालंटियर तो सही-सलामत हैं ?

मैं एक मिनट के लिए रुका ही था कि लल्लू बाबू लिफ्ट से निकलकर तेजी से मेरे पास आए और बोले—भइये, मालती जी ने अभी तय किया है कि वे दंगाग्रस्त इलाके में जाएंगी···वहां के लोगों से मिलेंगी···

आप सब लोग तैयार रहिए…सब लोग साथ जाएंगे…

—लेकिन वहां जाना ठीक होगा ? मैंने यूं ही पूछा—खतरा बहुत हो सकता है !

—खतरों से डरते हैं तो पालिटिक्स में क्यों आए हो भइये ! लल्लू बाबू ने अपने लहजे में कहा और लपकते हुए कार्यालय की ओर चले गए।

—अच्छा, मैं ज़रा चलूं ! कहकर मैंने जग्गी बाबू को वहीं छोड़ा और ऊपर चला गया।

फोन खड़कने लगे और यह खबर उन सब लोगों को दे दी गई, जो भी फोन पर मिल सकते थे, कि मालती जी दंगाग्रस्त इलाके का दौरा करेंगी…वे एक जुलूस का नेतृत्व करती हुई जाएंगी, इसलिए जो भी आ पाएं, यहीं होटल में जमा हो जाएं।

देखते-देखते खासी भीड़ जमा हो गई। छोटे-मोटे लोग तो नीचे कार्यालय के पास ही खड़े रहे, पर जो खास थे, वे मालती जी के कमरे और बरामदे में जमा थे। जगतसिंह ने लाठियों में झण्डे पहना दिए थे। भीड़ को जुलूस के रूप में चलने का तरीका समझा दिया था।

मैंने देखा था, जग्गी बाबू कुछ परेशान-से गलियारे में टहल रहे थे। मैंने जाकर पूछा—जग्गी बाबू क्या बात है ?

—कुछ नहीं ! कहकर वे लिफ्ट के पास खड़े हो गए थे। तभी मालती जी चार-पांच लोगों के साथ निकली थीं। लल्लू बाबू से उन्होंने इतना ही कहा था—इन लोगों को भी बता दीजिए ज़रा…

और लल्लू बाबू ने सबको रोक लिया—सुनिए, सुनिए…और पंद्रह-बीस लोगों का वह मजमा जो मालती जी के लिए रुका हुआ था, लल्लू बाबू के गिर्द जमा हो गया था।

मालती जी लिफ्ट में चली गईं तो जग्गी बाबू भी एकाएक उसी में घुस गए थे। लिफ्ट नीचे जा रही थी और जग्गी बाबू ने बहुत हिचकते हुए मालती जी से कहा था—वह इलाका बहुत खतरनाक है। मेरे खयाल से आपको वहां नहीं जाना चाहिए ! मैं अपने को रोक नहीं पाया इसलिए

कह रहा हूं ! यूं मुझे कोई हक नहीं है कि कुछ भी कहूं या राय दूं···

मालती जी की आंखें छलछला आई थीं। उन्होंने आदत के मुताबिक पलकों को झपका-झपकाकर आंसू संभालने की कोशिश की थी···पर न संभाल पाने के कारण अपने हैण्डबैग से धूप का चश्मा निकाला था और चुपचाप लगा लिया था। शायद इसीलिए कि जग्गी बाबू उनकी आंखों में आए आंसुओं को न देख पाएं।

लिफ्ट मे निकलकर जग्गी बाबू सीधे अपने केबिन में चले गए थे। मालती जी लॉबी मे पहुंची थीं, तो बाहर खड़े लोगों ने उन्हें घेर लिया था। छोटे-से जुलूस की तैयारियां थी।

आखिर जब सब जमा हो गए तो लल्लू बाबू ने नारा लगाया—

हिंदू-मुस्लिम !

भीड़ ने साथ दिया—भाई ! भाई ! !

और एक छोटा-सा जुलूस चल दिया। कुछ लोग साइकिलों पर थे। मालती जी व हम लोग जीप पर थे। लल्लू बाबू ने पुख्ता इंतजाम कर दिया था। बस्ती के पास तक आकर मालती जी जीप से उतर पड़ी थीं। जुलूस की भीड भी कुछ मिनटों में ही पास आ गई थी। वहा पर कुछ लोग मिर्जा साहब के साथ इंतजार कर रहे थे। कुछ देर वहा बातचीत होती रही। एक कार्यकर्त्ता ने सुझाया—पुलिस का इन्तजाम रहे तो ठीक है !

सुनते ही लल्लू बाबू भड़क गए—भइये ! क्या बात करते हैं आप ? मेरे साथ नारा लगाइए—मालती जी !

वे सज्जन चीखे—जिंदाबाद !

लल्लू बाबू चीखे—हिंदू-मुस्लिम !

मिर्जा साहब और भीड़ ने साथ दिया—भाई-भाई !

और जुलूस चल दिया। मालती जी के आगे-आगे मिर्जा साहब और लल्लू बाबू थे—कुछेक लोग और, जो उसी मुहल्ले के थे। हम पुराने बाजार एरिया में घुसे तो तमाम लोग तमाशबीनों की तरह दोनों तरफ जमा थे। जुलूस पुराने बाजार में अपने चुनाव कार्यालय पर आकर रुक गया। बूढ़े मियां ने फौरन टीन की कुर्सी मालती जी के लिए हाजिर की।

मिर्जा साहब ने मोर्चा संभाला—हाजरीन! ···आज मालती जी खुद आप सबसे मिलने और कुछ कहने आई हैं। कल से, जब से इन्हें पता चला कि बदमाश गुण्डों ने यहां मारपीट की है और भाइयों-भाइयों में तफरका फैलाने की कोशिश की है, तब से मालती जी बुरी तरह बेचैन है···यह काम उन जाहिल और फिरकापरस्त लोगों का है जो इन्सानी कीमतों को धूल में मिला देना चाहते हैं···गरीब और उन भूखे लोगों को, जो जिंदगी की जद्दोजहद में अपना खून-पसीना बहा रहे हैं, ये वहशी लोग उन्हें खूंखार जंगली जानवरों में बदल देना चाहते हैं···ताकि वे आपस में लड़ते रहें, अपने भाइयों की गर्दनें काटते रहें और उन लोगों के खिलाफ न उठ खड़े हों जो सचमुच इनका खून चूसते हैं···गरीबों का खून चूसनेवाले तबके की यह साजिश है कि गरीब एक न होने पाएं···

तभी उस छोटे-से मजमे में सनसनी-सी हुई। लल्लू बाबू कल की मार-पीट में घायल हुए, पट्टी बांधे, दो लोगों और एक बच्चे को लिए हुए चले आ रहे थे। उन घायलों को उन्होंने फौरन मालती जी के सामने पेश किया···मालती जी उन लोगों के साथ खड़ी-खड़ी कुछ बातें करती रहीं। प्रेस फोटोग्राफर भी आ गया था, उसने तस्वीरें उतारीं और मिर्जा साहब बोलते रहे—इन्हें देखिए! इस बच्चे को देखिए···इस मासूम ने किसका क्या बिगाड़ा था? मिर्जा साहब ने घायलों की ओर इशारा किया—मैं कहता हूं···यह वहशीपन हमारे शहर में नहीं चलेगा···हमारे सूबे में नहीं चलेगा···हमारे मुल्क में नहीं चलेगा! हम उन ताकतों से लड़ेंगे, उन वहशी ताकतों से टक्कर लेंगे जो यह घिनौना और अलील खेल खेल रही हैं···

तभी कुछ शोर मचा। कुछ नारे सुनाई दिए—चन्द्रसेन! जिंदाबाद! गुलशेर अहमद! जिंदाबाद!

कुछ हलचल-सी हुई। कुछ लोग घबराए। गली के मुहाने की तरफ से चन्द्रसेन और गुलशेर अहमद के सपोर्टर मिला-जुला जुलूस लिए चले आ रहे थे। गली में भीड़ बढ़ गई थी। हमारी चल रही सभा के पास आते ही उन विरोधियों ने नारे लगाने शुरू किए—

यह झूठा नाटक !
बंद करो, बंद करो !

हम लोगों को भी जोश आ गया था। हमारे सपोर्टर उनके विरोध में नारे लगाने लगे—

चन्द्रसेन ! मुर्दाबाद !
गुलशेर अहमद ! मुर्दाबाद !

तब तक उन लोगों की तरफ से नया नारा आया—

मालती मालती ! बस्ता क्यों नहीं बांधती !
जनता तेरे खिलाफ है ! कहना क्यों नहीं मानती !

और वे लोग इस नारे को कीर्तन की तरह जोर-जोर से गाने लगे। इधर से भी जोश लहरा आया—

चन्द्रसेन ! दलाल है !
गुलशेर अहमद ! कलाल है !

नारों का यह युद्ध कुछ देर चलता रहा···और जोशो-खरोश में हाथा-पाई हो गई। पत्थरबाजी हुई। भगदड़ मची और चीख-पुकार के साथ सब कुछ तहस-नहस हो गया। मालती जी एक पत्थर से ज़ख्मी हुई थी। बूढ़े मियां भी अपना कमजोर घुटना पकड़े वहीं चबूतरे पर पड़े बिलबिला रहे थे। मालती जी को हम लोग भीतर कोठरी में ले आए थे। लल्लू बाबू ने फौरन अपने झोले से कपड़ा निकालकर पट्टी फाड़ी और मालती जी के सिर पर बांध दी गई।

पुलिस भी आ गई थी। गली में सन्नाटा छा गया था। पत्थर और ढेले जहां-तहां पड़े थे। कुछ चप्पलें और टूटे हुए डंडे पड़े थे। दुकानें चट-पट बंद हो गई थीं। पटरी पर बैठने वाले छोटे-मोटे कारोबारी लोग अपनी चीजें समेटकर इधर-उधर तितर-बितर हो गए थे।

कोठरी से हम लोग बाहर निकले तो बूढ़े मियां को दीवार का सहारा

लिये कराहते देखा, तो लल्लू बाबू ने नुस्खा बताया—भइये, आप इसपर कड़वे तेल को गरम करके मालिश कर लें···

और मालती जी को लेकर हम होटल लौट आए थे।

यों भीड़ तो कम हो गई थी, पर जो भी सुनता कि मालती जी के चोट लगी है, वह मिलने और देखने चला आ रहा था। खासा झमेला ही हो गया। लल्लू बाबू सबको बता रहे थे—कोई तरीका है भइये! अमन की सभा में बदअमनी! आप ही बताइए, यह कोई तरीका है, भइये!

जग्गी बाबू को मैंने बताया था कि मालती जी के चोट आ गई है। यों भी उन्हें पता चल ही जाता। सिर पर पट्टी बंधी सबने देखी थी। मिलनेवालों की भीड़ टूट नहीं रही थी। आखिर हमने लोगों को रोकना शुरू किया। जग्गी बाबू दो बार लौट चुके थे। मालती जी के [बाहर वाले कमरे में भीड़ थी, और बेडरूम मे भी आदमी घुसे हुए थे।

आखिर शाम के बाद तांता टूटा। खाना वहीं बेडरूम मे मंगवा लिया गया। जग्गी बाबू तीसरी बार आए तो बेडरूम में कुछेक लोगों को देखकर बाहर कमरे मे ही इंतजार करते रहे···

लल्लू बाबू अब अपने पूरे रंग मे थे। सारी कारंवाई का सेहरा अपने सिर बांधते हुए बोले—अब बताइए, कैसी रही!

मालती जी धीरे से मुस्करा दीं। कुछ बोलते-बोलते रुकीं। फिर कहने लगीं—लल्लू बाबू, हुआ तो सब ठीक ही···लेकिन···

—देखिए, चुनाव का मामला है, इसमें लेकिन-वेकिन नहीं चलता! हां! हर काम तय करके ही किया जाता है···मैंने पहले ही बद्री को सब बता दिया था ··जब तक आपके चोट नही लगती, हंगामा चलता रहता! हां···लल्लू बाबू ने कहा तो मैंने टोका—मान लीजिए, चोट ज्यादा ही आ जाती तो···

—अरे भइये, तुम अभी बच्चे हो। कैसे चोट ज्यादा आ जाती? जितनी चोट तय की गई थी, उतनी ही आ सकती थी!·· लल्लू बाबू ने मुझे फटकार दिया था।

मैं चुपचाप बाहर वाले कमरे मे चला आया था। जग्गी ··बाबू रास्ते

में खड़े थे। मैंने उनकी बांह पर हाथ रखकर भीतर चलने और मालती जी को देखने के लिए इशारा किया, तो उन्होंने इशारे से कह दिया—नहीं, अब नहीं...

और दुखी-से, आश्चर्यचकित-से कमरे से निकलकर वे अपनी टैरेस पर चले गए थे।

मैं भी चुपचाप नीचे कार्यालय में चला आया। न किसी बात की खुशी थी, न संतोष। अगर कहूं कि मलाल था, तो वह भी गलत होगा। मलाल भी नहीं था। इतनी ज्यादा सच्चाई बरती भी नहीं जा सकती। शायद जग्गी बाबू के सामने बात खुल आने से ही मुझे कुछ दुःख हुआ था। नहीं तो, बहुत-सी बातों के लिए यों भी आंख लपेटनी पड़ती है। खैर, जो हुआ, सो हो गया था।

कुछ देर बाद लल्लू बाबू भी आ गए। वे जीत के नशे में थे। इसी वक्त लाला दीनानाथ का एक आदमी आ गया। आते ही उसने कहना शुरू किया—मिर्जा साहब के मुहल्लेवाली सभा में मालती जी ने जो कुछ लाला दीनानाथ के लिए कहा है, वह अच्छा नहीं हुआ है!

—क्या अच्छा नहीं हुआ है, भइये? लल्लू बाबू ने बीच में टोका।

—यही कहना कि लाला जी जातिवाद के सहारे इलेक्शन लड़ रहे हैं...

—तो और क्या कहा जाता? आप ही बताओ, भइये! लल्लू बाबू बोले।

—कुछ भी और कहा जाता!

—अरे भइये, लगता है तुम बुरा मान गए हो...

—लालाजी ने बहुत बुरा माना है...

—पहला इलेक्शन लड़ रहे हैं न लाला जी, इसीलिए! दूसरा-तीसरा लड़ेंगे तो बुरा मानना छोड़ देंगे। समझे भइये! इलेक्शन का धर्म यही है कि सब-कुछ कहा जाए, पर कही बात में कभी विश्वास न किया जाए... समझे भइये!

—लेकिन यह तो और भी गलत बात है! उस आदमी ने कहा।

—आप नहीं समझोगे···भण्डारी जी, इन्हें एक अठन्नी दो भइये ! आप जाके एक गिलास दूध पियो और आराम से सो जाओ जाके। यह चक्कर आपकी समझ से परे है···हां···कहकर लल्लू बाबू लेट गए— और हमें भी सोने दो···समझे भइये !

वह आदमी अपमानित-सा उठ गया।

उसके जाते ही लल्लू बाबू ने अपनी मिक्चर की शीशी निकाली और आदतन उसे हिलाकर एक खुराक पी गए।

—यह मिक्चर तो उसी रात खत्म हो गया था, लल्लू बाबू···आपने तीनों खुराकें पी ली थीं। डाक्टर के यहां भी नहीं गए। यह शीशी फिर कैसे भर गई ? मैंने पूछा तो लल्लू बाबू निश्छल हंसी हंसे और बोले— भइये, तुम भी एक खुराक पी लो, तबियत हरी हो जाएगी ! ···जरा नमकीन का इंतजाम करो भइये ! कहते हुए उन्होंने दूसरी खुराक पर अंगूठा लगाया और उसे भी पी गए। फिर दांत चूसते हुए बोले—क्या करें भइये, अपन लोगों की जिंदगी ही ऐसी है···इस जिंदगी का गुरुमंत्र है—हर काम करो, पर उसकी शक्ल बदलकर करो···समझे, भइये !

मैं लल्लू बाबू को शायद अब अच्छी तरह समझने लगा था। भण्डारी ने बताया कि उन्होंने रामायण बांचने वाले पंडित जी का प्रबन्ध कर दिया है दूसरे दिन दोपहर को ही एक जीप से लल्लू बाबू ने पंडित जी को पूरे तामझाम के साथ सिहोर गांव पहुंचा दिया था। मुखिया जी ने रामायण-पाठ की खबर अपने गांव तथा आसपास के गांव के लोगों को पहुंचा दी थी। मौली, पान, सुपारी, तुलसीदल, प्रसाद और हवन की पूरी सामग्री का इन्तजाम लल्लू बाबू ने कर दिया था।

हम जब मालती जी और विदेशियों के साथ गांव पहुंचे तो रामायण-पाठ समाप्त हो चुका था। हवन चल रहा था। विदेशी यह सब देखकर

बहुत खुश हुए थे और सब बातों को जानने में लगे थे। पंडित जी भी समझदार निकले। मालती जी को देखते ही बोले—मैया, आप बहुत भागवान हैं···भगवान की इच्छा के बगैर उनकी पूजा में कोई सम्मिलित नहीं हो पाता! इन सबका और आपका भाग्य एक डोर में बंधा है! कहते हुए उन्होंने जमा हुए गांववालों की ओर इशारा करते हुए मालती जी से कहा—आइए, हवन कीजिए!

—इनसे भी हवन करवाओ। लल्लू बाबू ने विदेशियों की ओर इशारा करते हुए मुझसे कहा। मैंने विदेशियों को बताया कि वे चाहें तो हवन में शामिल हो जाएं। मालती जी ने तबतक उनकी हथेलियों में हवन-सामग्री थमा दी और विदेशी भी हवन में शामिल हो गए। गांववाले गद्‌गद हो गए। जो इधर-उधर थे, वे भी जमा हो गए। गांव की औरतें कौतुक से घूंघट दबा-दबाकर यह अद्‌भुत दृश्य देखती रहीं···और गांव भर में मालती जी के इस करिश्मे की तारीफ फैल गई—अरे, यो तो अंग्रेज से भी हवन करवा लेती हैं। साक्षात पार्वती हैं···

हवन के बाद पंडित जी ने जयकारा लगाया—बोल सियावर रामचंद्र की···जय! भीड़ ने उत्साह से साथ दिया।

और पंडित जी के जयकारे समाप्त होते ही लल्लू बाबू ने अपना लगाया—बोल मालती जी की—

—जय! भीड़ ने उसी तरह साथ दिया।

गांव हमने सर कर लिया था। अब मीटिंग में कुछ रखा नहीं था। जो काम होना था, वह हो चुका था। विदेशियों के आने और हवन में उनके शामिल हो जाने का असर पैर लगाकर गांव-गांव चल पड़ा है, इसका अहसास हमें वहीं होने लगा था, क्योंकि सिहोर के पास के गांवों के लोग भी रामायण-पाठ में आए हुए थे।

हम कोई मौका चूकना नहीं चाहते थे। प्रसाद खूब बांटा गया और लल्लू बाबू की अक्ल की दाद देनी ही पड़ी। वे गंगाजली में तुलसीदल डाले आचमनी लिए सबको चरणामृत बांट रहे थे और कहते जाते थे—भगवान का चरणामृत साक्षी है···हमारा साथ देना! सौगंध है राम जी की! भूलना मत!

और फिर जमकर सभा हुई। गांव वाले सूखा-पानी से तो इतने दुखी नही थे, पर शहर के सरकारी अमलों और खाऊ लोगों से कुढ़े हुए थे। मालती जी ने हवा का रुख देखकर ही मीटिंग में भाषण दिया।

बेसिक स्कूल की एक मेज लगाकर मंच बन गया था। स्कूल से ही कुर्सियां भी आ गई थीं। मालती जी, विदेशी अतिथि, लल्लूबाबू, मैं और भण्डारी जी कुर्सियों पर जमे हुए थे। मुखिया भी हमारे साथ थे। जगत-सिंह जनता में बैठे थे। मालती जी ने सरकारी अमलों और बेईमान पटवारियों, नायब तहसीलदारों और बी० डी० ओ० के बारे में खुलकर बातें कीं। उन्होने कहा—मुझे मालूम है कि गावों-जैसी ईमानदारी शहरों में नही है। मुझे यह भी मालूम है जब आप गाववाले मुश्किलें लेकर कोर्ट-कचहरी या सरकारी दफ्तरों में जाते हैं तो वहां के छोटे-छोटे चपरासी और बाबू लोग पैसा लिए बगैर आपका काम नही करते। आपको परेशान करते हैं। जगह-जगह ऐसे भ्रष्टाचारी, ऐसे खाऊ लोग घुस गए हैं···हम इनका सफाया करेंगे, पर इसका मतलब यह नही कि आप सब पर शक करें। ईमानदार लोग भी हैं जो आपकी सेवा करना चाहते हैं, जो इस भ्रष्टाचार और खाऊपने को खत्म करना चाहते हैं···देखिए! पांचों अंगुलियां बराबर नही होतीं···कहते हुए मालती जी ने अपना हाथ उठा-कर बात समझाई···

भीड़ में बैठे जगतसिंह ने ताली बजाई और पूरी भीड़ ताली बजाने लगी।

बगल में बैठे विदेशी ने जानना चाहा कि मालती जी ने क्या बात कही है तो लल्लू बाबू ने आधी अंग्रेजी और आधी हिन्दी में उसे सम-झाया—शी टोल्ड, हाथ की सब अंगुलिया आल फिंगर्स आर नाट बराबर ···ईक्युल! हमारे बीच बुरे आदमी, बैड पीपुल भी हैं और गुड पीपुल भी हैं।

अभी मालती जी का हाथ उठा हुआ ही था कि भीड़ में से एक बूढ़ा पागल-सा आदमी उठकर चीखा—इंकीलाब···जिंदाबाद! और नारा लगाने के बाद उसने कौर पकड़ने की तरह अंगुलियों को मिलाया और वहीं से मालती जी से बोला—पर देखो, खाते बखत सब बरोबर हो जातीं

हैं ! और वह बूढ़ा पागल-सा आदमी अपनी अंगुलियों को मिलाए भीड़ को दिखाता रहा—हां !' ऐसे खाते वखत बरोबर हो जाती हैं ! ···ई आई आर, बीबीसी आई—यानी रामप्रसाद बिस्मिल !

उस पागल-से बूढ़े की प्रतिक्रिया देखकर सब गांववाले हंसने लगे। विदेशी ने बहुत उत्सुकता से जानना चाहा कि बूढ़ा क्या कह रहा है, तो लल्लू बाबू ने समझाया—वह कह रहा है···ही टोल्ड···कि हम सब आप के साथ हैं, जैसे ये मिली हुई अंगुलियां है···लाइक दीज़ ज्वाइन्ट फिंगर्स। वी आर टुगेदर···जोश में आकर विदेशी ने ताली बजाना शुरू कर दिया ! उसने अपने साथियों को भी बताया तो वे भी ताली बजाने लगे। मालती जी ने तनिक परेशानी से उन लोगों की ओर देखा और खुद भी ताली बजाने लगीं। लल्लू बाबू ने भी साथ दिया, और भीड़ भी तालियां बजाने लगी। जगतसिंह उस बूढ़े पागल-से लगते आदमी को लेकर भीड़ से निकल गया। उसका सभा में बैठना खतरनाक था।

एक क्षण बाद मालती जी ने सबको शांत करते हुए कहा—ये विदेशी दोस्त भी कितने खुश हैं, आपने देखा। ये खुश है कि हमारे यहां हर आदमी को अपनी बात कहने की छूट है और हम सब साथ हैं···कि आप सब हमारे साथ हैं·· यही हमारी ताकत है ! हम आपके हैं और आप सब हमारे ! *मैं आपको विश्वास दिलाती हूं कि आपकी परेशानियां हम खत्म करेंगे*···लेकिन यह तभी हो सकता है जब आप इसी तरह हमेशा हमारा साथ दें जैसे आज दिया है। जय हिंद !

सभा समाप्त हुई तो सब बहुत खुश थे। ज़रा ज्यादा ही खुश थे। उस बूढ़े *पागल-से आदमी के बारे में पूछने पर पता चला था कि वह पुराना* गांधीवादी है। अब पागल हो गया है और गांव-गांव घूमता रहता है, अपनी साइकिल पर। सबसे लड़ता-झगड़ता रहता है। नेताओं या हुक्कामों को देखता है तो खाने को दौड़ता है। लोगों ने बताया कि यह तो गनीमत हुई कि उसने इस सभा में गड़बड़ नहीं की। नहीं तो वह सरेआम इज्जत उतार लेता है।

उस पागल-बूढ़े की शक्ल मुझे लौटते हुए बराबर याद आती रही

थी। रास्ते भर मैं उसीके बारे में सोचता रहा था। आखिर थके-हारे हम वापस पहुंचे। लल्लू बाबू के चेहरे [illegible] या न भइये, रामायण-पाठ करवाओ [illegible] जाए तो समझो, पूरा मैदान मार लिया। अब सिहोर गांव तो सॉलिड हो गया! हो गया सालिड या नहीं?…फिर आंख दबाते हुए उन्होंने कहा—भइये, थोड़े नमकीन का प्रबन्ध हो जाए तो…

विदेशियों का डिनर था। हम लोगों को वहां तो नहीं खाना था, पर तैनात तो रहना ही था। कुछ और लोग भी थे ही। बावजूद इसके कि मालती जी ने मना कर दिया था। यानी ऐसे लोग ही थे जो बिलकुल आपसी के माने जा सकते है या जिन्हें आपसदारी के घेरे में हमें समेटना था।

जाम आ गए थे और सब विदेशियों ने मालती जी के स्वास्थ्य और विजय की कामना के साथ जाम टकराए। मालती जी की एक विशेषता यह भी है कि हर तरह के माहौल में खप जाती हैं। मालती जी ने अपना जाम उठाते हुए बड़ी शालीनता से उनकी शुभ कामनाएं स्वीकार कीं। बातें चलने लगीं, यही कि भारतीय जनतंत्र अब पुख्ता नीव पर खड़ा है। भारत के नेताओं का गांववालों से बड़ा गाढ़ा सम्पर्क और सम्बन्ध है। भारत ने एक नई आशा दुनिया को दी है। सब खुश और मस्त थे। मालती जी भी घूंट भरती जा रही थीं। ताज्जुब था कि लल्लू बाबू चुपचाप मेरे साथ खड़े थे। तभी जग्गी बाबू एकदम मुक्त-से भीतर आए थे और विदेशी मेहमानों के नेता के पास आकर पूछने लगे थे—होप यू आल आर इंज्वाइंग वेल! नो कम्पलेंट सर!

'ओह नो! एवरी थिंग इज जस्ट फाइन!' विदेशी ने कहा था। जग्गी बाबू के आते ही एक बात हुई थी। मालती जी का हाथ एकाएक अपने जाम तक गया था और उन्होंने अपना गिलास अनजाने ही कुर्सी के किनारे छुपा लिया था। मैं जानता हूं, यह परहेज के कारण नहीं था…पर जग्गी बाबू के होते वे एक सहज संकोच से भर गई थीं। पता नहीं क्यों, सब बातों के बावजूद यह संकोच मुझे प्यारा लगा था। जग्गी

बाबू ने भी इस संकोच को भांप लिया था और वे बेयरों को समझाकर जल्दी से जल्दी उस कमरे से निकल गए थे। उसके बाद मालती जी कुछ बुझ-सी गई थीं···अपने भीतर ही भीतर। उसके बाद नया जाम वैसे का वैसा ही सामने रखा रहा था, और उनकी आंखें जब-तब उस दरवाज़े को ताक लेती थीं जिससे जग्गी बाबू आ सकते थे। लेकिन जग्गी बाबू बहुत समझदार आदमी हैं। जब तक खाना-पीना चलता रहा, वे नहीं आए।

हां, लल्लू बाबू ने भी अपना काम कर लिया था। उन्होंने अपनी खुराक-लगी शीशी में दवा भरवा ली थी। एक कागज़ में कुछ काजू लपेटकर मेरी जेब में ठूंस दिए थे ''भइये, थोड़ा-सा नमकीन है। और गायब हो गए थे।

सुबह हम उठे तो अखबारों का ढेर जमा था। हम अपनी मीटिंग की रिपोर्ट देख रहे थे। कुछ पत्रों में हमारी निश्चित जीत की भविष्यवाणी थी। कुछ में सिर्फ खबर थी। दो अखबारों में बेहद गंदी रिपोर्ट आई थीं। समझ में नहीं आता कि इतनी झूठी और गलत बातें कैसे गढ़ी जा सकती थीं। लल्लू बाबू बहुत उत्तेजित थे—कल शाम की पार्टी में उस मरियल-से आदमी को देखा था भइये? वह जो मशक की तरह पी रहा था। यह कारस्तानी उसी की है···

रिपोर्ट में बेसिर पैर के इलज़ाम लगाए गए थे—'मालती जी के चुनाव-अड्डे—गोल्डन सन में शराब और शबाब से भरी रंगीन रातें!'

यह तो तय था कि यह सब विरोधियों ने लिखवाया है, पर वे इतनी गंदगी उछालेंगे, इसका अंदाज़ नहीं था। रिपोर्ट में आगे कहा गया था कि मालती जी ने चुनावों में जीतने के लिए शराब के ड्रम खुलवा दिए हैं। होटल गोल्डन सन में शराब की नदियां बह रही हैं···इतना ही नहीं,

होटल गोल्डन सन पिछले दिनों से शबाब का 'अड्डा' बन गया है जहां मालती जी का साथ देने का वचन देने वालों को रंगीन रातें गुज़ारने की सब सुविधाएं दी जाती हैं !…और यह सब काम मालती जी के पूर्व पति जगदीश वर्मा के जरिए हो रहा है। जगदीश वर्मा ने प्रभावशाली व्यक्तियों को जीतने के लिए होटल को चकले में बदल दिया है…ग्यारह बजे रात के बाद होटल में वही लोग घुस सकते हैं, जिनको मैनेजमेंट से इजाज़त मिल जाती है। इतना ही नहीं, मालती जी के कारकुन सांझ कल शाम को वेश्याओं के मुहल्ले में घूमते हुए देखे गए।

यह पढ़ते-पढ़ते लल्लू बाबू थरथरा गए—यह सब बकवास है ! जब आप लोग होटल की तरफ लौट रहे थे तब मैं मिर्ज़ा साहब के घर चला गया था और मिर्ज़ा साहब के आदमी के साथ मैं कव्वाली गानेवाली सलीमा बेगम को तय करने गया था। दस मिनट में हम लोग लौट आए थे और ये हरामज़ादा यह सब लिख रहा है भइये ! राजनीति इतनी गंदी हो गई है, यह नहीं पता था…

चुनाव कार्यालय में अजीब-सी मुर्दनी छा गई थी। सबके चेहरे पिटे हुए-से थे। हालांकि यह सब गलत और बेबुनियाद था, लेकिन जनता के मूड के बारे में कुछ भी कह सकना मुश्किल होता है। मैं इसलिए भी ज़्यादा परेशान था कि जग्गी बाबू पर बेबात कीचड़ उछाला गया था।

अभी हम लोग तैयार हो ही रहे थे कि दूसरा बम फटा। हमारा एक शहरी कार्यकर्ता साइकिल दौड़ाता हुआ आया और उसने एक पर्चा दिया, जो मालती जी के विरोध में छपाया गया और बांटा जा रहा था—उस गलीज़ पर्चे की सुर्खी थी—'मालती जी के काले कारनामों का कच्चा चिट्ठा !'

इस गलीज़ पर्चे में मालती जी की व्यक्तिगत ज़िंदगी को लेकर बहुत बेहूदी बातें की गई थीं। इस तरह की छीछालेदर कि क्या कहा जाए ! उसमें नम्बरवार बातें उठाई गई थीं।

1. जगदीश वर्मा—गोल्डन सन के मैनेजर मालती जी के पति हैं, प्रेमी हैं या यार ?
2. क्या यह सही है कि जगदीश वर्मा ने मालती जी को इसलिए छोड़

दिया था कि वे उनके 'बस' में नहीं रह गई थी ?

3. क्या यह सही है कि जगदीश वर्मा ने एक बार मालती जी के किसी चाहनेवाले को गोली मार देने की धमकी दी थी ?
4. क्या यह सही है मालती जी अपनी बच्ची लिली को जगदीश वर्मा के पास छोड़कर भाग गई थी ?
5. क्या यह सही है कि मालती जी ने अपने चुनाव के लिए सेठों की गर्दनें दबाकर और डरा-धमकाकर चंदा वसूल किया है ?
6. क्या यह सही है कि मालती जी ने चार-चार लाख की पांच कोठियां खड़ी कर ली हैं ?
7. क्या यह सही है कि मालती जी हर शाम शराब के नशे में धुत रहती हैं ?
8. क्या यह सही है कि मालती जी के कारण कई हंसते-फूलते घर टूटकर नरक बन गए हैं ?

और अंत में एक पैराग्राफ और था—हम महिला-समाज की सदस्य महिलाएं अपने लिए मालती जी जैसी महिला को कलंक समझती हैं। ऐसी चरित्रभ्रष्ट और दुराचारी महिला के लिए हमारे मन में गहरा गुस्सा और नफरत ही हो सकती है। हम अपनी बहनों और महिला वोटरों के साथ-साथ भाइयों और पुरुष वोटरों को भी सचेत करती हैं कि वे महिलाओं की कलंक मालती जी को वोट न दें। हमारी परंपरा सीता, पद्मिनी, लक्ष्मीबाई और सरोजिनी नायडू की है ! महिलाओं के नाम पर मालती जी के फंदे में फंसनेवालों को हम आगाह करती हैं और प्रण करती हैं कि जहां-जहां वे जाएंगी, हम काले झण्डों से उनका विरोध करेंगी !

—महिला समाज की ओर से प्रचारित और प्रसारित !

यह पर्चा पढ़ते ही सबके चेहरे काले पड़ गए थे। सन्नाटा छा गया था। भण्डारी जी ने चाय बनवाकर स्टोव भी बुझा दिया था। इसलिए सन्नाटा और गहरा हो गया था। ऐसा लग रहा था जैसे रातों-रात सब तहस-नहस हो गया हो···और सुबह होते हमारे बीच कोई मौत हो गई

हो। हम सब एक-दूसरे से कन्नी काट रहे थे। नजरें बचा रहे थे, यह जानते हुए भी कि यह सब निहायत बकवास, गलीज, झूठा और कमीनेपन से भरा हुआ है! सच्चाई का एक रेशा तक इसमें नहीं है।

चुनाव कार्यालय में तो सन्नाटा था ही, मालती जी के कमरे से भी कोई फोन नहीं आया था। शायद पर्चा तो उन तक नहीं पहुंचा होगा, पर अखबारों का बण्डल पहुंच चुका था। दिदा गया था, वह भी नहीं लौटा था। हमें अफसोस तो था ही, पर मुझे खासतौर से गुस्सा इस बात का था कि इन कमीनों ने जग्गी बाबू को बदनाम किया था। हम तो राजनीतिक लोग हैं। हमारे अपने खेल हैं। हम सब खिलाड़ी हैं, हम झटका खाकर भी उठ खड़े होते हैं। कलंकों को भी धो लेते हैं या ज्यादा बड़े कलंक औरों पर लगाकर अपने कलंकों को छोटा कर लेते हैं। या जनता की याददाश्त कम होने का फायदा भी उठा लेते हैं क्योंकि हम निडर होकर, या कहिए कि किसी हद तक बेशर्मी से, मैदान में डटे रहते हैं; हार भी जाते हैं तो फिर उसी मैदान में जीतने के लिए लौटते हैं···पर जग्गी बाबू के लिए यह सब मौके कहां हैं? वे तो खुद ही किनारा किए बैठे हैं और उन जैसे साधु व्यक्ति को इस लपेट में लेना बहुत गलत हुआ था।

एक तूफान आया था और कीचड़ की भयानक बारिश हुई थी। हर कार्यकर्ता जैसे अपने से डर रहा था। जगतसिंह चुपचाप डायरी खोलकर देखता और फिर बंद करके इधर-उधर ताकने लगता। लल्लू बाबू पंक्चर होकर पड़े थे। उन्हें शक था कि मालती जी शायद उनकी इस बात पर यकीन नहीं करेंगी कि वे कव्वाली-गायिका को खोजने के लिए उस मुहल्ले में गए थे।

बहुत देर बाद भण्डारी रामनारायण ने खामोशी तोड़ी – गुरुसरन जी, महिला समाज नाम की कोई संस्था आज तक तो सुनी नहीं! यह आज कैसे पैदा हो गई?

लल्लू बाबू भी उठकर बैठ गए—बात मौके की है भइये! और पर्चों को उलट-पलटकर देखते हुए बोले—मेरे खयाल से तो मानहानि का

मुकदमा ठोक देना चाहिए ?

—लेकिन किस पर ? भण्डारी ने कहा—नाम तो किसी का है नहीं !

लल्लू बाबू ने फिर पर्चे को उलटा-पलटा—प्रेस तक का नाम नहीं है···यह तो सरासर जुर्म है भइये ! आखिर यह पर्चा किसी प्रेस में छपा तो है ही। और रातों-रात छपा है। इसका मतलब है, प्रेस भी शहर का है···पुलिस साथ दे तो पता तो लग सकता है !

—हम यहां मुकद्दमा लड़ने नहीं, चुनाव लड़ने आए हैं। जगतसिंह अपनी ही परेशानी मे मुब्तिला था।

—भइये, राजे ! मुकद्दमा भी चुनाव का एक हिस्सा है ! लल्लू बाबू बोले।

—तो चलिए, पहले वही लड़ लें ! जगतसिंह ने चिढ़कर कहा।

—भइये, तू तो ऐसे बिगड़ रहा है जैसे पर्चा मैंने छापा हो !

—इन बातों में क्या रखा है ? यह सोचिए कि अब इस कीचड़ को साफ कैसे किया जाए ? मैंने खाली दिमाग से कहा, क्योंकि कुछ कहना जरूरी लग रहा था।

—शाम को बहुत बड़ी मीटिंग भी है···कल महिलाओं वाली सभा है···जगतसिंह ने डायरी देखकर कहा—इसीलिए अफरा-तफरी में यह पर्चा आज ही बांटा गया है ! ताकि औरतों वाली मीटिंग मे कल हंगामा हो जाए !

तभी लल्लू बाबू को दूर की सूझी। बोले—भइये, वो उस दिन महिला सेवा मण्डल वाली देवियां मालती जी के लिए सम्मान सभा करना चाहती थी, अगर उन्हें पकड़ा जाए तो कैसा रहे ?

—किसलिए ? भण्डारी जी ने पूछा।

—उनमे से दस-बीस को पकड़कर सबसे पहले मालती जी के पास भेजा जाए। वे जाकर कहें कि वे मालती जी को अपना नेता मानती हैं। इससे मालती जी को नैतिक बल मिलेगा और यह स्टेटमेंट जारी करें कि इस तथाकथित और नापैद महिला समाज की ओर से जो कुछ छपवाया गया है, वे सब उसका घोर विरोध करती हैं ! यह खबर फौरन

अखबारों को दी जाए और आज शाम की औरतों की मीटिंग से पहले उन महिलाओं को घर-घर भेजा जाए जहां जाकर वे इस गंदे प्रचार के विरुद्ध जनमत तैयार करें ! लल्लू बाबू ने पुराने खिलाड़ी की तरह पांसा फेंका ।

—ज़रा यह भी तो सोचिए, मालती जी के दिल पर इस वक्त क्या गुज़र रही होगी ? सुबह से दस फोन आ जाते थे। वे किस तकलीफ में खामोश बैठी होंगी ? उनका रवैया क्या होगा ? उनसे राय लिए बग़ैर हमें कुछ नहीं करना चाहिए ! भण्डारी ने राय दी ।

इस बात के बीच मुझे रह-रहकर अग्गी बाबू का ध्यान आ रहा था। उनके लिए कोई नहीं सोच रहा था। उस आदमी पर क्या गाज गिरी होगी ? हम लोग अपनी मिसकोट कर ही रहे थे कि एक बेयरा हमारी डाक लेकर आया। मैंने धीरे से उससे दरयाफ्त किया—मैनेजर साहब नीचे आ गए हैं ?

—जी नहीं, उनकी तबियत ठीक नहीं है ! बेयरे ने बताया।

—क्यों, क्या हुआ ?

—मालूम नहीं साहब···कहता हुआ वह चला गया।

—मेरा माथा ठनका। अजीब हालत थी। लेकिन कोई क्या कर सकता था, अब जो कुछ था, भुगतना ही था। एक क्षण के लिए तो मन में आया था कि सब डेरा-डाबर तम्बू-कनातें उखाड़कर चल दिया जाए। तभी जगतसिंह ने कहा—सचमुच बहुत गड़बड़ हो गया है···कुछ समझ में नहीं आता···मेरा तो दिमाग ही फेल हो गया है।

—और मेरे दिमाग को भण्डारी जी फेल किए दे रहे हैं भइये ! लल्लू बाबू ने कहा।

—सब बातें एक साथ जुड़ गई हैं ! भण्डारी ने लल्लू बाबू से कहा—कल शाम विदेशियों की पार्टी, आपका वेश्याओं के मुहल्ले में जाना···

लल्लू बाबू एकदम बिगड़ गए—भण्डारी भइये ! ज़रा सोच-समझकर बात कहो। तुम्हीं कहोगे कि मैं वेश्याओं के मुहल्ले में गया था, तो औरों का मुंह कैसे बंद कर लोगे ?

—मेरा यह मतलब नहीं, भण्डारी बोले—मतलब यह कि बदमाशों

ने बात का बतंगड़ बना दिया है ! सारा काम बिगाड़ दिया है। मालती जी भी इस बवंडर को बर्दाश्त नहीं कर पाएंगी…

तभी देखा—होटल की सीढ़ियों से मालती जी उतर रही थीं। वे सीधे कॉटेज की तरफ ही आ रही थीं। पीछे-पीछे बिंदा था।

मालती जी का चेहरा सूजा-सूजा-सा था। आंखें भरी-भरी। शरीर सुस्त और थका हुआ। पर कमाल की हिम्मत है उनमें। उनके आते ही हम सब खड़े हो गए थे। वे काफी निश्चिंत नजर आ रही थीं। पर मुझे अहसास हो रहा था कि वे बड़ी कोशिश से अपने को संभाले हुए थीं। होठों पर सीखी पर हलकी मुस्कराहट लाते हुए उन्होंने कहा—जो कुछ छपा है, पढ़ लिया आप लोगों ने।

किसीने कोई जवाब नहीं दिया। एक क्षण की चुप्पी के बाद वे फिर बोलीं—क्या हुआ है आप लोगों को ? …वे धीरे से व्यंग्य से हंसीं—थ…यह सब तो होता रहता है। इसका भी मुकाबला करेंगे…

—लल्लू बाबू का खयाल है, हमें मुकदमा कर देना चाहिए। जैसे-तैसे जगतसिंह ने कहा।

—हूं ! वे फिर हंसीं—कानून की अदालतें हमारी अदालतें नहीं हैं। हमारी सबसे बड़ी अदालत है जनता ! वहीं, उसी जनता की अदालत में यह मुकदमा लड़ा जाएगा और जीता जाएगा ! हम अपनी तरफ से, और अपनी जरूरत के मुताबिक यह मुकदमा लड़ेंगे…

मालती जी की शब्दावली साफ थी। जीत और जरूरत जैसे शब्द फिर आ गए थे और मैं समझ गया था कि भूचाल का सामना करने के लिए वे अपनी पूरी राजनीति के साथ तैयार थीं।

—यह पर्चा आपने देखा ? ? यह भी, आज अभी सुबह ही बांटा गया है। भण्डारी ने कारनामों के कच्चे चिट्ठे वाला पर्चा उनके सामने कर दिया। वह उन्होंने नहीं देखा था। चश्मा लगाकर उसे उन्होंने पढ़ा। कुछ पलों के लिए काले बादल उनके थके हुए चेहरे पर मंडराए… फिर भीतर से खून की ललाई आई…फिर [illegible] सिमट आया खून पारे की तरह उतर गया और उन्होंने [illegible] की ओर बढ़ा।

दिया—हूं ! रखो···शाम को महिलाओं वाली मीटिंग में यह पर्चा मुझे देना···इसका जवाब मैं वहीं दूंगी ! और जरूर दूंगी ! ···आप लोग परेशान न हों···अपना काम करते रहें···इन हमलों को मैं देखती रहूंगी···

इतना कहकर वे चली गईं।

मैं कुछ देर सोचता रहा कि जग्गी बाबू के पास जाऊं या नहीं, क्योंकि उस दिन मालती जी के व्यवहार और जग्गी बाबू के एकदम चले जाने से मेरे लिए कहीं कुछ अटक गया था। मालती जी ने तो जरूरत के मुताबिक अपना दिमागी तनाव खत्म कर लिया था, पर मैं बीच में लटक गया था। मैं सोच ही नहीं पा रहा था कि मालती जी मेरा उनसे मिलना पसंद करेंगी या नहीं। या जग्गी बाबू उस शाम के बाद मुझसे उसी तरह मिलेंगे या नहीं। फिर मुझे लगा कि बीच के इन बरसों में मेरा और जग्गी बाबू का अपना एक दोस्ती का रिश्ता भी रहा है। वे शायद मुझे खुद न बुलाएं—इस चुनाव-चक्कर के दौरान,पर मुझे जाना चाहिए। मैंने एक निगाह होटल की ऊंची बिल्डिंग पर डाली ··उस तरफ देखा, जिस तरफ जग्गी बाबू का टैरेस एपार्टमेंट था। थोड़ी देर और सोचा, फिर चल ही दिया—उनकी तबियत भी तो खराब थी।

मैं जब पहुंचा तो वे काफी झुंझलाए हुए थे। फोन का रिसीवर हाथ में लिए आपरेटर पर बिगड़ रहे थे—तीन घंटे से अर्जेन्ट कॉल नहीं मिल रही। तमाशा है···यू गो आन ट्राइंग। येस···पी० पी० सेंट मेरीज गर्ल्स हाई स्कूल···प्रिन्सिपल मदर मिराण्डा ! येस प्लीज···और एक झटके से रिसीवर उन्होंने रख दिया ! कुछ क्षण माथा पकड़े हुए वे बैठे रहे।

—कैसी है तबियत ? मैंने पूछा।

—अरे, आप कब आए ? जग्गी बाबू ने मुझे आते हुए नहीं देखा था—मैंने देखा ही नहीं ! तबियत, बिलकुल ठीक है।

—बेयरे ने बताया कि···

—हां···ऐसे ही···वे बोले।

—आप कुछ परेशान हैं ! मैंने कहा। मेरी नज़र बंद घड़ी पर भी पड़ी और टाफी के उस डिब्बे पर भी, जिसमें वे लिली के ख़त रखते थे, और सुबह के उन अखबारों पर भी जिनमें वे गलीज़ रिपोर्टें आई थीं। वह पर्चा भी पड़ा हुआ था जो नापैद महिला समाज की ओर से छापा गया था।

—नहीं·· परेशानी किस बात की···जग्गी बाबू बहुत खोए-खोए थे। वे अपनी परेशानी छुपाने की कोशिश में लगे हुए थे। धीरे से बोले—गुरुसरन जी, एक शेर याद आ रहा है—

नक़्शा उठा के अब कोई नया शहर देखिए !
इस शहर में तो सबसे मुलाकात हो गई !

मैं चुपचाप उन्हें देखता रहा···ऐसा लगा, जैसे कोई आदमी रास्ते पर पड़े पैरों के निशान मिटाता हुआ और कहीं जाने की कोशिश कर रहा हो। कितनी कठिन थी यह कोशिश और कितनी पीड़ा-भरी। जग्गीबाबू चुपचाप बाहर की ओर देख रहे थे—शीशे की दीवार के उस पार।

वातावरण अजीब हो गया था। जग्गी बाबू शायद खुलने के मूड में नहीं थे। वे अपने भीतर-भीतर घुमड़ रहे थे। अगर फोन न आ जाता तो शायद वे खुलते भी नहीं। यह तो मैं समझ ही गया था कि उन्होंने पचमढ़ी में लिली के स्कूल की प्रिंसिपल के लिए ट्रंककॉल बुक करवा रखा है और बेसब्री से उसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। तभी फोन की घंटी बजी। जग्गी बाबू ने रिसीवर उठाया, ट्रंककॉल मिल गया था, वे फोन पर बात करने लगे थे—प्रिंसिपल···मदर मिराण्डा···गुडमार्निंग···दिस इज़ जगदीश वर्मा फ़ाम भोपाल···येस···येस लिली कैसी है···जी, मैं चाहता था कि उसे आप वहीं रोक लें, जी···भोपाल न भेजें···छुट्टियां तो खराब होंगी···जी, मैं जानता हूं···हां, लिली ज़रूर ज़िद करेगी···पर कुछ ऐसी दिक्कत है कि मैं चाहता हूं, वह वहीं रुकी रहे···यहां न आए···जी, हो सकता है मैं ही आ जाऊं, आप उसे समझा दीजिएगा प्लीज़, ओके···

फोन रखकर उन्होंने मुझे देखा, अब सब साफ़ था।

—लिली आनेवाली थी ? मैंने पूछा।

—हां, उसकी पन्द्रह दिनों की छुट्टियां थी। लेकिन मैंने उसे वहीं होस्टल में रोक दिया है।

—अकेली रहेगी होस्टल में ?

—आखिर मेरी बच्ची है ! रह लेगी। मैं नही चाहता था कि वह इस वक्त यहां आए। मैं नही चाहता कि अपनी उम्र से पहले वह दुनिया की चालाकियों से परिचय प्राप्त कर ले। मैं नही चाहता कि वह अपने बाप और मां की टूटी हुई जिन्दगी के इस पक्ष को अभी जाने और हमेशा के लिए डिस्टर्ब हो जाए ! मेरे पास अगर अपनी बच्ची को देने के लिए कुछ नहीं है, तो उससे वह क्यों छीन लू जो उसके पास है ? ···जग्गी बाबू ने कहा।

—लेकिन···

—'लेकिन' क्या गुरूसरन जी ! इस कीचड़ मे लिथड़ने के लिए उस बच्ची को भी आने दू ? कहते हुए उन्होंने वे अखबार एक ओर पटक दिए—उसका क्या दोष है ? मुझे ही बताइए, मेरा क्या दोष है ?

—यह गंदगी इधर राजनीति मे बहुत आ गई है !

—यों आपकी राजनीति से मुझे क्या लेना-देना है ? इस कीचड़ और गंदगी को मैं क्यों बर्दाशत करूं ? आपकी राजनीति का शिकार मैं और मेरी बच्ची क्यों हो जाएं ?···

—ज्यादती तो हो गई है·· क्या कहा जाए ?

—आप लोगों के पास कहने के लिए है क्या ? जग्गी बाबू ने कहा, तो इस 'आप लोगो' का मतलब मैं समझ गया था। वे बहुत भरे हुए थे। कहते ही चले गए—मैं सब छोड़-छाड़कर कही और चला जाऊंगा, गुरूसरन जी···इसलिए नही कि मैं कमजोर हूं या जिन्दगी में जो फैसला मैंने लिया था, उसे गलत समझता हूं, या मैं कुछ चाहता हूं···सिर्फ इसलिए कि मालती को जो दुनिया चाहिए···जो सक्सेस और सफलता चाहिए, वह उसे मिलती चली जाए ! मेरी वजह से उसमें रुकावट न आए··· वह यह न समझे कि मैं कहीं उसके रास्ते में हूं ! मुझे कोई पछतावा नही है ! मेरी जिंदगी में अब कोई तमन्ना उससे जुड़ी हुई नहीं है···लेकिन मैं

यह नहीं चाहता कि अपनी किसी असफलता का दोष वह मेरे सिर मढ़ दे···उसे कोई बहाना मिल जाए···कि मेरी वजह से उसे नुकसान हुआ !

—यह आप क्या कह रहे हैं ?

—मैं ठीक कह रहा हूं ! मैं नहीं चाहता कि मेरी बच्ची आपकी ज़ालिम पालिटिक्स की शिकार हो जाए···कल को कोई उठकर यह भी कह सकता है कि यह मेरी बच्ची नहीं है···आपकी दुनिया का ज़मीर मैं खूब जानता हूं गुरूसरन जी। आपके यहां औलाद के रिश्ते तक को इस्तेमाल किया जा सकता है ! मैं अपनी बच्ची को आपकी इस गलीज़ दुनिया से दूर रखना चाहता हूं···और आपकी मालती जी के नाम पर मुझे लेकर कीचड़ उछाला जाए, यह भी मैं नहीं चाहता···बारह बरस पहले जो खुला रास्ता उसे देकर मैं दूसरी तरफ चला आया था···उस रास्ते में मैं अपनी छाया तक को नहीं आने देना चाहता···एक क्षण रुककर जग्गी बाबू ने गहरी सांस ली और कहा—गुरूसरन जी, सोच-समझकर एक फैसला और लिया है मैंने···एक बार तय किया है···मैं होटल की मैनेजरी से रिज़ाइन कर रहा हूं और यहां से जा रहा हूं !

—क्या !

—हां···मेरा यहां रहना किसीके हित में नहीं है ! लिली के हित में नहीं है। मेरे हित में नहीं है और आपकी मालती जी के हित में नहीं है ! हूं। इसलिए मैंने यह फैसला लिया है···

—जल्दीबाज़ी में आपको त्यागपत्र नहीं देना चाहिए जग्गी बाबू ! मैंने उन्हें समझाने की कोशिश की।

—जल्दीबाज़ी ! जल्दीबाज़ी कैसी ? मुझे क्या जीतना है या हासिल करना है, जिसकी जल्दीबाज़ी होगी ! और वे व्यंग्य से हंस दिए थे।

तभी फोन बजा। जग्गी बाबू ने उठाया। सुनकर उनके होंठों पर टेढ़ी-सी मुस्कराहट आई और फोन रखते हुए बोले—आपका बुलावा आया है। भण्डारी जी का फोन था। मालती जी को कोई काम है, कमरे में बुलाया है।

मैं उठकर चला आया। मालती जी के पास पहुंचा तो देखा, लल्लूबाबू व जगतसिंह भी बैठे हुए हैं। यों आभास हुआ कि वे नार्मल हैं। उन्होंने जैसे सब सोख लिया था और अपने पैंतरे भी तय कर लिए थे। पहुंचते ही उन्होंने सवाल दाग़ा—कहां थे आप? कुछ काम होना है या नहीं···

—जी, वो मैं ज़रा जग्गो बाबू के पास चला गया था। पता चला कि उनकी तबियत ठीक नहीं है! मैंने कहा।

—तबियत ठीक नहीं है? मालती जी के पूछने में कशिश थी।

मुझे यह बदलाव ज़रा आश्चर्यपूर्ण लगा था। लेकिन किसीकी भावनाओं पर शक भी तो नहीं किया जा सकता। आखिर तो एक सम्बन्ध दोनों का रहा ही है। सारे ठंडेपन और बेरुखी के बावजूद कभी-कभी भावनापूर्ण पल उसके बीच में आ भी सकते हैं। मैंने थोड़ा परखने के लिए कहा—हां, कोई खास बात नहीं है।

—अखबार-अखबार पढ़कर परेशान हो गए होंगे···उनकी आदत है! खैर···हां, तो आप मिर्ज़ा जी के यहां चले जाइए। अभी खबर मिली है कि शहर में साम्प्रदायिक तनाव फिर पैदा हो रहा है! गुलशेर अहमद के लोगों ने अपने कुछ कार्यकर्ताओं को डराया-धमकाया है। पुराने बाज़ार वाले अपने आफिस के लोग काम करने के लिए बाहर नहीं निकल पा रहे हैं। संभलकर जाइएगा। और हां, अब नाम वापस लेने की तारीख तो गुज़र गई। लाला दीनानाथ का क्या रवैया है? मालती जी ने एक काम सौंपते हुए दूसरा सवाल भी कर दिया।

—उन्हें सपने आने लगे हैं कि वे जीत सकते हैं! लल्लू बाबू ने कहा। मालती जी हंसी। सबको हंसी आ गई।

—आप पता कर लीजिए···और लाला दीनानाथ से कह दीजिए कि जीत के सपने आने बंद हो गए हों तो वे ऐलान करें कि वे मेरे पक्ष में आ गए हैं और चाहते हैं कि उनके पक्षधर मुझे वोट दें। यह ऐलान वे उसी मंच से करेंगे, जिससे मैं बोलूंगी···ठीक है! मालती जी ने कहा।

—उसके बाद लाला दीनानाथ के जितने चुनाव-दफ्तर हैं, सब बंद कर दिए जाएंगे, उनके वालंटियर हमारे साथ काम करेंगे और खुद लाला

दीनानाथ मालती जी के साथ हर मीटिंग में शामिल रहेंगे ! लल्लू बाबू ने सारी शर्तें साफ कर दीं—नहीं तो वो सारी मदद बंद कर दी जाएगी, जो अभी तक हम लाला दीनानाथ को देते रहे हैं···समझ गए, भइये !

—अरे, तो मैं लाला दीनानाथ या उनका आदमी तो नहीं हूं, जो आप मुझे इस तरह···मैं बोला।

—तुम्हें समझा रहा हूं कि कैसे बात करना···तुमसे थोड़े ही कह रहा हूं भइये ! हां ! लल्लू बाबू बोले—सब निपटाकर आना···

मैं सीधा पुराना बाज़ार एरिया में गया। दफ्तर तो खुला हुआ था ···बूढ़े मियां भी घुटने पर हल्दी की पुल्टिस बांधे बैठे थे। और कोई नहीं था। मैंने पूछा—और सब कहां हैं ?

—काम करने गए हैं ! बूढ़े मियां ने बताया।

—सुना है, गुलशेर अहमद के आदमियों ने अपने लोगों को डराया-धमकाया है ? मैंने पूछा।

—कैसी बातें करते हैं आप भी ! बूढ़े मियां मुस्कराए—काम करने वाले दोनों के एक हैं। कौन किसे धमकाएगा ! आप खुद सोचिए !

—अफ़वाह होगी ! मैंने चलते हुए कहा।

—अफ़वाह होगी तो खुद उन्हीं के आदमियों ने फैलाई होगी··· जी···कहकर बूढ़े मियां अपना घुटना दबाने लगे।

मैं वहां से चलकर सीधा लाला दीनानाथ के यहां पहुंचा, उनसे अकेले में सारी बातें कीं। उन्होंने कहा कि वे मालती जी से मिलकर ही सब बातें तय करेंगे। जब तक पूरी बात तय न हो जाए, कोई खबर बाहर नहीं जानी चाहिए। यह भी जाहिर नहीं होना चाहिए कि लाला दीनानाथ और मालती जी की कोई गुप्त मीटिंग हुई है। मुझे यह ज़िम्मेदारी सौंपी गई कि उनकी व मालती जी की मीटिंग तय करके मैं उन्हें खबर दूंगा।

यह सब तय करके मैं चला आया। रास्ते-भर लाला दीनानाथ की बातों पर सोचता रहा। उनकी बातों से इतना जरूर लग रहा था कि मामला शायद पैसों पर अटकेगा। वे बार-बार यही बात कहते थे—गुरु-सरन जी, डेढ़-डेढ़ लाख तो अलग से मेरी जेब से खर्च हो चुका है जी···

वह नुकसान कौन उठाएगा !

लौटकर होटल पहुंचा तो मैंने सारा हाल बता दिया। लाला दीनानाथ की मीटिंग मालती जी के साथ तय करवाकर खबर भिजवा दी। ज़रा-सा आराम करने के लिए पीठ टिकाई ही थी कि जग्गी बाबू का फोन आया —एक मिनट के लिए आ सकते है ?

जग्गी बाबू के पास पहुंचा तो अहम खबर मिली। मेरे बाज़ार चले जाने के बाद लल्लू, भण्डारी जी और जगतसिंह को विदा करके मालती जी अकेली जग्गी बाबू के एपार्टमेंट में पहुंची थीं। जग्गी बाबू ने ही सारी बात तफसील से बताई थी।

—सुना, आपकी तबियत कुछ खराब हो गई है ! मालती जी ने उनसे पूछा था।

—आपको गलत खबर मिली है। जग्गी बाबू बोले थे।

—आप बैठने के लिए भी नही कहेंगे ?

—बैठिए ! कहते हुए जग्गी बाबू ने एक कुर्सी खिसका दी थी, पर मालती जी कुर्सी पर नही बैठी थी। वे बिस्तर के एक कोने पर बैठ गई थीं।

—और कोई हुक्म ! जग्गी बाबू ने व्यंग्य से पूछा था।

—मुझे बहुत अफसोस है···

—किस बात का ? मैंने जिन्दगी मे जो कुछ किया है या जो कुछ मेरे साथ हुआ है, मुझे किसी बात का अफसोस नही है। कोई अफसोस नही है। जग्गी बाबू ने कहा था।

—सचमुच ? मालती जी ने बहुत गहराई से टटोलते हुए पूछा था।

—हां !

—लेकिन मेरी वजह से आपको जो कुछ सुनना पड़ा है या बर्दाश्त

करना पड़ा है, मुझे उसका अफसोस है। और कुछ न भी हो तो भी इतना तो मैं हमेशा चाहती रही हूं कि हमारा साथ रहना, या अलग रहना··· हमारे बीच की बात रहे! मालती जी बोली थीं—इसमें दूसरे लोग दखल क्यों दें?

——यह तो तुम्हारी दुनिया की बातें हैं, तुम बेहतर जानती होगी! मुझे तो मालूम नहीं कि राजनीति की तुम्हारी दुनिया के क्या-क्या उसूल हैं। मैं मामूली आदमी हूं और मामूली तरीके से ही अपनी जिन्दगी बसर करना चाहता हूं। ये खून खौला देने वाले तनाव···दिमाग खराब कर देने वाली कमीनी हरकतें···ये नीचता की हद तक सड़ांध में उतार लेने वाली तुम लोगों की मजबूरियां और ये उठा-पटक, छीना-झपटी···यह सब मेरी दुनिया है ही नहीं··

—आपकी सब बातें सही हैं। पर मैं हमेशा यही सोचती रही कि पति-पत्नी के रूप में, या उस रूप में न भी सही···मेरा और आपका रिश्ता···हमारे आपसी फैसलों का रिश्ता है—मालती जी ने कहा था।

—इससे मैं कब इन्कार करता हूं। लेकिन जो फैसला हमें लेना था, वह तो हम बारह बरस पहले ले चुके हैं! जग्गी बाबू बोले थे।

—इसके बावजूद···मालती जी कुछ हिचकिचाकर बोली थीं—यह तो आप भी जानते हैं कि आपसे अलग होने के बाद मैंने अपनी व्यक्तिगत जिंदगी में कभी कोई ऐसा कदम नहीं उठाया जो आपके लिए अपमान का कारण बनता! मेरी ज़िंदगी में कोई पुरुष या प्रेमी या पति कभी भी रहा है तो वह सिर्फ आप ही रहे हैं! ···इतना कहकर मालती ने उदास नज़रों से जग्गी बाबू को देखा था।

—मैंने कभी यह नहीं कहा कि कोई और रहा है। जग्गी बाबू ने कहा।

—लेकिन अगर दूसरे कहें, तो?

—तो मैं क्या कर सकता हूं?

—आपको इससे तकलीफ नहीं होती···

—होती है मालती···होती है···जग्गी बाबू भावुक हो आए थे।

—बस, इतना ही मुझे जानना था···सिर्फ अपने लिए। मालती जी

ने कहा था और उनकी आंखें भर आई थीं।

—और सिर्फ अपने लिए मैंने तय किया था कि मैं त्यागपत्र देकर लिली को लेकर यहां से भी चला जाऊंगा। कहीं और कोई काम ढूंढ़ लूंगा! जग्गी बाबू बोले थे।

—यह आप नहीं करेंगे। मेरे कारण आप दस तरह की बातें सुनें, बर्दाश्त करें और अपने ढर्रे से उखड़ जाएं···यह मैं बर्दाश्त नहीं कर पाऊंगी···प्लीज, आप रिज़ाइन नहीं करेंगे ··मालती जी ने इसरार से कहा था।

—कोई रास्ता पलटता नहीं मालती···रास्ते तो, अपनी राह चले जाते हैं···आदमी पलट जाता है···लेकिन मैं अब आदमी कहां रह गया हूं···मैं अब सिर्फ एक रास्ता रह गया हूं···वह भी केवल लिली के लिए! उसे अभी मेरी जरूरत है। जब उसे भी जरूरत नहीं रहेगी तो रास्तों की तरह ही मैं अपनी राह चला जाऊंगा···जग्गी बाबू ने भावुक होकर कहा था।

—कैसी बातें कर रहे हैं आप? मालती जी ने पिघलते हुए कहा था।

—ठीक कह रहा हूं मालती! हूं तो आदमी ही ··पर एक रास्ते की तरह रह गया हूं। कभी-कभी कुछ पलों के लिए आदमी बनता हूं तो सब कुछ उसी तरह व्यापने लगता है, जैसे एक आदमी को व्यापना चाहिए···कुछ देर के लिए दुःख-सुख, ममता-प्यार सब उमड़ता है··· उसके बाद सब समाप्त हो जाता है···मैं महज एक रास्ता रह जाता हूं। इसलिए मेरी बातों के गलत अर्थ कभी मत लगाना···जग्गी बाबू ने कहा था।

—किन बातों के? मालती जी ने पूछा था।

—वही ··जो कुछ इस बीच कभी-कभी मेरे मन ने उमड़कर तुम्हारे लिए कुछ किया, या किसी जरिए से कुछ कहने की कोशिश की। पीले गुलाब की कली ने शायद तुमसे कुछ कहा होगा···पर उससे मेरा मकसद यह नहीं था कि तुम लौट आओ या मैं पलट आऊंगा। हमारी-तुम्हारी ज़िंदगी में एक खूबसूरत क्षण कभी आया था, उसे मैंने एकबार और जी

लिया। बस ! इसके अलावा मेरा कोई और मकसद नहीं था। न होगा ! जग्गी बाबू ने बात साफ कर दी थी।

—शायद आपने उस दिन मेरी बात का बहुत बुरा माना था जब मैंने आपसे इतने बरसों बाद कुछ कहा था···

—नहीं, बिलकुल नहीं ··सिर्फ अपने पर अफसोस हुआ था कि कुछ न चाहते हुए, कुछ न मांगते हुए, कोई तमन्ना न करते हुए भी ये खूबसूरत क्षण क्यों मेरे भीतर जाग पड़ते हैं ? अब, जबकि इन क्षणों से कुछ भी लेना-देना नहीं है, तब ये क्यों लौट आते हैं···इसका अफसोस जरूर हुआ था।

—और अब ?

—कोई अफसोस नहीं !

—सच !

—हां !

—आपने अपने को पत्थर बना लिया है ?

—नहीं।

—तो···कभी कुछ कहूं—तो मानेंगे ?

—जब तुम्हें कुछ कहने की जरूरत पड़े तो बता देना।

—अब भी ऐसे ही सोचते रहेंगे···

—और क्या कर सकता हूं ! इतना भरोसा जरूर दे सकता हूं कि तुम जब भी, जो भी मुझसे चाहोगी, हमेशा मिलेगा। जो कुछ तुम्हें चाहिए ··मैं हमेशा दूंगा ! जग्गी बाबू ने गहरी नजरों से मालती जी को देखा था।

—मेरे लिए इतना ही बहुत है ! मालती जी ने बहुत उदासी से कहा था—अच्छा, तो मैं जाऊं···बहुत लोग इन्तजार कर रहे होंगे।

और वे चुपचाप चली गई थीं।

सब कुछ बताकर, जो भी उनके और मालती जी के बीच घटित हुआ था, वे मेरी ओर देखने लगे थे। मैं भी चुप था। फिर उन्होंने ही पूछा था—गुरुसरन जी, इस सबका मतलब क्या है ? आज बारह बरस हो गए, मुझे मालती से कुछ लेना-देना नहीं रहा है···मैंने कभी उसका

रास्ता भी नहीं काटा। उसके जरिए कुछ चाहा…पर वह हमेशा यही समझती रही कि मुझे शायद उसकी जरूरत पड़ेगी…उस दिन भी उसके कमरे में जो कुछ हुआ, वह भी इसी बात का सबूत था। वह नहीं चाहती थी कि मैं किसीसे कहूं कि मालती मेरी बीवी रही है। लेकिन आज यह आना, मेरी तबियत का पता करना…कुछ समझ में नहीं आता। पिछले बारह बरसों में भी तो बीमार पड़ा होऊंगा…उसे पता भी चला होगा। जब मेरा आपरेशन दिल्ली में हुआ था, तब भी वह वहीं थी, पर तब भी उसे जानने की जरूरत महसूस नहीं हुई थी…लिली के बारे में भी जानने की उसने कोशिश नहीं की…यह सब क्या है? अब ऐसा क्या हो गया है…

जग्गी बाबू यह सवाल मुझसे कर रहे थे! मैं कैसे उन्हें बताता कि जरूरत पड़ने पर और वक्त आने पर मालती जी कुछ भी कर सकती हैं—इस बात का अहसास आपको मुझसे ज्यादा होना चाहिए! पर मेरा मन यह कह नहीं पाया। मेरा चुप रहना ही बेहतर था।

और इस घटना के बाद ही चमत्कार हुआ।

मैं कभी सोच नहीं सकता कि यह सब भी हो सकता था। मुझे उस समय तक विश्वास नहीं हुआ जब तक सब घटित नहीं हो गया। सभी अवाक् और बौराए हुए थे, क्योंकि किसी के लिए भी यह विश्वास कर सकना संभव नहीं था।

हमारे चुनाव-अभियान की यह अन्यतम और शाहकार मीटिंग थी। गांधी मैदान में सभा आयोजित हुई थी। बहुत भीड़ थी। इतनी कि हमने कल्पना तक नहीं की थी। जितने आदमी थे, उतनी ही औरतें। मालती जी के कारण औरतों में अतिरिक्त उत्साह था। पुराने बाजार में सिर पर मालती जी ने जो चोट खाई थी, वह बहुत कारगर साबित हुई थी। और

या जनता में किस तरह बातें फैलती हैं और कैसी-कैसी कहानियां सांसें लेने लगती हैं, इसका अंदाज उस दिन की सभा से ही लग सकता था। पूरा गांधी मैदान खचाखच भरा हुआ था और हर तरफ यही चर्चा थी कि मालती जी जैसी दबंग और साहसी औरत का जवाब नहीं। उनका कद एकाएक बहुत बड़ा हो गया था। सब लोग उनके सामने अपने को जैसे बौना मानने लगे थे। और राजनीति में यही सबसे बड़ा क्षण होता है—बराबरी का ऐलान करते हुए बराबर वालों से बड़ा हो जाना! बराबर वालों को यह अहसास करा देना कि कोई उनसे बहुत बड़ा है, यही मालती जी ने हासिल किया था।

जनता ऐसे उमड़ी थी जैसे किसी देवदूत को देखने आई हो। गांधी मैदान में सुननेवालों के अलावा खोंचेवाले भी आ गए थे। वह सभा नहीं, मेला लग रहा था। तमाशबीन भी थे, पर केवल तमाशबीन ही नहीं थे। वे मालती जी को देखना भी चाहते थे। झंडों की भरमार थी। काग़ज की झंडियां लिए बच्चे घूम रहे थे। खोंचेवाले बहुत प्रसन्न थे—

हम लोग—यानी मैं, भंडारी, मिर्जा साहब और चुनाव-कार्यालय के बाकी लोग—पहले ही सभास्थल पर पहुंच गए थे। यह तो मुझे मालूम था कि लाला दीनानाथ वाला कर्मकाण्ड आज होगा, क्योंकि सब बातें तय हो गई थीं। लेकिन उससे भी बड़ा आश्चर्य उपस्थित होगा, इसका शायद किसीको कोई अंदाज नहीं था।

यह सारी कारवाई कुछ ज्यादा ही नाटकीय ढंग से रखी गई थी।

सभामंच पर चहल-पहल थी। लाउडस्पीकर पर गाने चल रहे थे। सब लोगों को मालती जी का इंतजार था। मंच पर आने का रास्ता बायीं ओर से था—जहां कारें आराम से आकर रुक सकती थीं। पर लल्लू बाबू के बंदोबस्त का लोहा भी मानना पड़ता है और अक्ल की दाद देनी पड़ती है।

एकाएक हमने देखा—मंच के सामने, जहां भीड़ प्रतीक्षा कर रही थी उसके पीछे कुछ कारें आकर रुकीं। उनमें से काफी लोग उतरे। बंदोबस्त के मुताबिक हमारी पार्टी के वालंटियर झण्डे फहराते हुए दायें-बायें से आए और 'मालती जी जिंदाबाद' के नारे लगाने लगे। श्रोताओं की

पिछली वाली पंक्तियों में हलचल मच गई। श्रोताओं के बीच से जो पतला रास्ता छोड़ा गया था, उसीसे नमस्कार लेतीं मालती जी आईं। पीछे फहराते हुए झंडे और जयघोषों की बौछार।

लल्लू बाबू तो आगे-आगे थे ही···सबसे बड़े आश्चर्य की बात यह थी कि मालती जी के साथ-साथ जग्गी बाबू भी चले आ रहे थे। यह चमत्कार कैसे हुआ था···यह मेरी समझ में नहीं आया था। मैं भी अवाक् था।

आखिर सब मंच पर आ गए। जगतसिंह मालती जी से ज्यादा जग्गी बाबू की देखभाल कर रहा था। होटल के मालिक नरसी सेठ भी साथ थे। पर जग्गी बाबू का जो सम्मान आज था, वह नरसी सेठ का भी नहीं था। मालती जी के साथ बहुत आदर से जग्गी बाबू को बैठाया गया। उन्हें भी मालाएं पहनाई गईं। जो जग्गी बाबू को नहीं जानते थे, वे निश्चय ही उन्हें कोई बड़ा नेता समझ रहे होंगे।

यों मालती जी के माथे पर लगी चोट ठीक हो चुकी थी, पर मैंने देखा, उसी जगह पर खासा बड़ा फाहा लगाकर प्लास्टर-पट्टियों से चिपकाया गया था, कुछ इतना बड़ा कि काफी दूर से भी दिखाई दे।

और तब सभा शुरू हुई।

लल्लू बाबू ने माइक पकड़ा, ठुक-ठुक किया। कुछ आवाज नहीं सुनाई दी तो लाउडस्पीकर वाले की तरफ देखकर बोले—ये बोलेगा न, भइये!

अपनी आवाज सुनाई पड़ते ही उन्होंने मोर्चा संभाला—भाइयो और बहनो! चंद दिन पहले अपने इस मशहूर शहर में वह सब हुआ है, जो कभी नहीं हुआ था। इस शहर की अपनी एक शानदार परम्परा और इतिहास है···हमारा यह शहर अपनी शानो-शौकत और तहजीब के लिए मशहूर रहा है और आज भी है। गंदगी, भद्दी बातें, लड़ाई-दंगे-फसाद, कमीनी हरकतें, अफवाहें और बेसिर-पैर के गंदे इलजाम लगाने की परम्परा हमारे इस शहर की नहीं रही है। और यह सब यहां के तहजीब-परस्त, कलाप्रेमी और अमनपसंद बाशिंदों के रहते हुए हुआ है, जो किसी सभ्य और शालीन आदमी को दुःख पहुंचा सकता है। यह सभा, आज की सभा इलेक्शन की मीटिंग नहीं है बल्कि यह अपने शानदार शहर की

शानदार परम्पराओं को फिर पेश करने और सड़ांध तथा कीचड़ से भर गए इस वातावरण को साफ करने के लिए आयोजित है। इलेक्शन जीत लेना आसान होता है; पर जो गंदगी और कीचड़ उछाली जाती है, उसे साफ करना बहुत मुश्किल है।

...अपने यहां दंगा हुआ! इतिहास में पहली बार! और आपने उन अखबारों को भी देखा होगा, जिनमें कुछ जलील और गलत इल्जाम मालती जी पर लगाए गए! आज उन सब बातों की सफाई होगी और आपके सामने होगी। आपको मालूम हो कि दंगाग्रस्त इलाकों में जाकर, वहां की जनता की तकलीफों में शामिल होकर और वहशी हो गए लोगों को रास्ते पर लाने की कोशिश के दौरान मालती जी खुद भी गुण्डों की मार की शिकार हुई थी। लेकिन वे बहुत हिम्मतवाली महिला हैं...साहस से भरी हुई नेता हैं! चोट अभी ठीक नहीं हुई है, लेकिन फिर भी वे हमारे बीच आई हैं! अब मैं मालती जी से दरख्वास्त करूंगा कि वे अपनी बातें आपसे कहें—मालती जी!

तालियों की एक जबरदस्त बौछार आई, मंच पर भी तालियां बजने लगीं। मैंने जग्गी बाबू को देखा—वे समझ ही नहीं पा रहे थे कि अपने हाथों का क्या करें...इधर-उधर अचकचाकर देखने के बाद तालियों की रौ में उन्होंने बड़े बेढंगे तरीके से एक बार ताली बजाई, फिर अपने दोनों हाथ मेज के नीचे लटका लिए। उनकी उलझन साफ थी।

माइक का घुटना तोड़कर वहीं फिट किया गया, जहां मालती जी थी। यों मालती जी हमेशा उठकर मंच पर खड़े होकर भाषण देती थीं। पर आज कुछ खास ही बात थी। शायद वे जग्गी बाबू से दूर नहीं जाना चाहती थीं।

मालती जी ने शुरू किया—बहनो और भाइयो! यह जो 'बहनो और भाइयो' की आज मैंने आवाज लगाई है...यह जो संबोधन किया है, इसका आज एक खास अर्थ है! आज मैं जनता की ही अदालत में नहीं, बल्कि अपनी बहनों और अपने भाइयों की अदालत में इंसाफ मांगने आई हूं। लोगों ने मुझसे कहा, मैं कानूनी अदालत में जाऊं! मैंने कहा: वह मेरी अदालत नहीं है! मेरी अदालत यह है, जहां इस वक्त मैं मौजूद हूं!

तालियों की बौछार फिर हुई। मिर्ज़ा साहब उछले और पास वाले से बोले—सुभान अल्लाह! क्या बात है! मालती को नज़र न लगे…अदब बोलती हैं अदब! वल्लाह…

…तो भाइयो! कुछ दिन पहले अखबारों में आपने पढ़ा होगा… मैं तो इतनी गंदी भाषा ज़ुबान पर भी नहीं ला सकती, लेकिन क्या करूं, आपकी अदालत में मामला पेश करने के लिए मुझे इल्ज़ामों की फेहरिस्त भी पढ़नी ही होगी और उसी भाषा में, जिस भाषा में वे लिखे गए हैं…

इस बीच जगतसिंह ने अखबार निकालकर मालती जी के हाथों में थमा दिया था।

…तो, सुनिए! इल्ज़ाम लगाया गया है—मालती जी के चुनाव-अड्डे—गोल्डन सन में शराब और शबाब से भरी रंगीन रातें!

…यह भाषा आपने सुन ली! अरे, हमने तो अपना चुनाव-कार्यालय एक झोंपड़ी में खोला था…लेकिन यह समझकर कि मैं एक औरत हूं और डर जाऊंगी, उन लोगों ने क्या सलूक किया, जो आज यह लिख रहे हैं! हमारे कार्यालय को लूटा गया, उसमें आग लगाई गई और हमारे शांत कार्यकर्ताओं को बुरी तरह पीटा गया…अब आप बताइए, या तो मैं डरकर चुनाव के मैदान से भाग जाती, या ईंट का जवाब पत्थर से देती…ये दोनों ही रास्ते बुज़दिली के होते। मैं कायर नहीं हूं…बुज़दिल नहीं हूं…

तालियों की फिर बौछार हुई, मिर्ज़ा साहब फिर उछले।

…इसलिए…इसलिए…इसलिए—मालती जी जनता के शांत होने का इंतज़ार कर रही थीं—इसलिए, हमने तय किया कि होटल में कार्यालय खोला जाए, जिससे कि मेरे चुनाव में जी-जान से जुटे लोग कम से कम अपने हाथ-पैर तो सलामत रख सकें…आखिर ये सब भी बाल-बच्चे वाले लोग हैं…आप ही बताएं, मेरे सामने और क्या रास्ता था? खैर… और यह खबर कि होटल में शराब की नदियां बह रही हैं, कितनी गलत और बेहूदा है, मैं क्या बताऊं! लेकिन आपकी अदालत में आई हूं तो झूठ नहीं बोलूंगी…अगर दूसरे देशों के लोग, विदेशी लोग हमारे घर आएं और उनके स्वागत-सत्कार के लिए कुछ किया जाए, तो क्या यह गलत है? शराब को हम गलत मानते हैं, पर वे पानी की जगह उसे पीते हैं…

क्या हम घर-आए मेहमान की बेइज्जती करें ? और यह किसी ने नहीं लिखा कि उन्हीं विदेशियों ने गांव में हमारे साथ जाकर भगवान का चरणामृत भी पिया ? हम अगर अपनी संस्कृति का सम्मान भी करते हैं तो जरूरी हो जाता है कि विदेशियों की संस्कृति का सम्मान करें ! जो दूसरों का सम्मान करना नहीं जानता, उसका सम्मान कोई नहीं करता···

···तो शराब की बात मैंने आपके सामने सच्चाई से साफ कर दी··· अब शवाब वाली बात को लें···ये शब्द ही इतना गंदा है कि मुझे कुछ भी कहते संकोच होता है···क्या यही हमारी तहजीब है कि हम अपनी बहनों के शरीरों के लिए शवाब शब्द का इस्तेमाल करें ?

···और जिस होटल का नाम लेकर यह गलीज प्रचार किया गया है, उसी होटल के मालिक नरसी सेठ और मैं···मैं···मै···ने···जर···साहब मेरे साथ यहीं मौजूद हैं !

मालती जी जग्गी बाबू को मैनेजर कहते और उनका नाम लेते हिच-किचाई थी, इसलिए, मैनेजर साहब, जैसे-तैसे कहकर उन्होंने उस वक्त अपना काम निकाल लिया था। जग्गी बाबू ने भी बहुत अटपटा महसूस किया था···पर यह तो पब्लिक मीटिंग थी, यहां सारा काम धड़ल्ले से होना था।

और वे आगे बोली थी—नरसी सेठ ने हमें फ्री रहने की जगह दी है, हमें फ्री खाना देते हैं ! इसलिए कि इनका भी उन्हीं उसूलों में विश्वास है, जिनमें हमारा है···मेरा कहना सिर्फ इतना है कि वे लोग जो गंदगी उछालते हैं···मुझे बदनाम कर लें, क्योंकि उन्हें हारने का खतरा मुझसे है। इन बेगुनाह लोगों को क्यों बीच में लपेटते हैं ? मैं खुले-आम कहती हूं कि इन गंदे और गलीज लोगों को जो बदला लेना हो, मुझसे लें···उन लोगों पर कीचड़ उछालना बंद करें, जिनका कोई दोष नहीं है !

नरसी सेठ का नाम जब मालती जी के भाषण के दौरान आया था तो वे अपनी कुर्सी से उचके थे। उन्हें इस बात की तमीज नहीं थी कि उनका नाम किस संदर्भ में आ रहा है। उन्हें सिर्फ यही खुशी थी कि उन का नाम आ रहा है और वह भी मालती जी जैसी नेता के जरिये ! मालती

जी ने जब खाने और रहने की फ्री व्यवस्था का जिक्र किया था तो नरसी सेठ को उम्मीद थी कि उनकी दरियादिली पर तालियां बजेंगी···और वे हाथ पर हाथ तैयार रखे थे। तालियां न बजने से उन्हें खासी मायूसी हुई थी, पर इतना संतोष उन्हें जरूर था कि फ्री वाली बात मालती जी ने कह दी थी।

फिर मालती जी ने आगे कहा—अब मैं अपनी बहनों से मुखातिब होना चाहती हूं।···और इसी बीच जगतसिंह ने फाइल से निकालकर 'महिला समाज' वाला पर्चा थमा दिया था। उसे हवा में लहराते हुए मालती जी ने कहा—यह पर्चा एक नापैद संस्था महिला समाज की ओर से बंटवाया गया है। मैं जानती हूं कि आपने इसे देखते ही नाली में फेंक दिया होगा···क्योंकि इस पर्चे से जो बदबू आती है, उसे कोई भारतीय नारी बर्दाश्त नहीं कर सकती।

मिर्जा जी एकाएक ताली बजाते हुए चीखे—हीयर···हीयर! और तालियों की गड़गड़ाहट भीड़ से होती हुई गुजर गई।

मालती जी ने प्रशंसा की दृष्टि से मिर्जा साहब को देखा और आगे बोली—क्या करूं, आप सब हाजरीन मुझे माफ करेंगे···मुझे इस पर्चे की भाषा में ही फिर बात करनी पड़ेगी। इसमें, इस पर्चे में पहला सवाल पूछा गया है—श्री···श्री—वर्मा···

लल्लू बाबू ने माइक में मुंह घुसेड़कर कहा—भाइयो और बहिनो! मालती जी अपने पति का नाम नहीं ले पा रही हैं, उनका नाम है श्री जगदीश वर्मा। होटल गोल्डन सन के मैनेजर साहब श्री जगदीश वर्मा!

मालती जी ने सूत्र जोड़ा—पूछा गया है कि गोल्डन सन के मैनेजर मेरे पति हैं, या प्रेमी हैं या···या···यार!···आप ही बताइए, यह जबान क्या हमारे घरों की है? लेकिन खैर···मैं इसका जवाब भी दूंगी। भाइयो और बहनो···खासतौर से मेरी बहनो! मुझे यह कहना है कि ये···ये··· मालती जी ने बहुत स्निग्धता से जग्गी बाबू की तरफ देखा था, और उसी क्षण लल्लू बाबू ने जग्गी बाबू को दूल्हे की तरह उठाकर खड़ा कर दिया था और मालती जी ने आगे कहा था—जी! यही हैं मेरे पति! पति परमेश्वर, मेरे दोस्त, मेरे प्रेमी और मेरे यार! जो कुछ भी हैं, यही

हैं! और ये मेरे साथ आपकी अदालत में मौजूद हैं!

तालियों की गड़गड़ाहट से सारा मैदान और मंच बड़ी देर तक गूंजता रहा था। जनता ने मालती जी की साफवयानी और साहस के सामने अपना माथा झुका दिया था और वह अनथके तालियां बजाती जा रही थी।

जग्गी बाबू निर्लिप्त-से खड़े थे। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि वे क्या प्रतिक्रिया व्यक्त करें। किधर देखें, खड़े रहें या बैठ जाएं··· उनकी समझ में कुछ नहीं आया तो सामने पड़ी मालाओं के ढेर में से फूल नोचकर वहीं उसकी पत्तियां गिराते रहे।

मिर्जा जी आपे से बाहर हो गए थे। तालियां बजाते-बजाते और भीतरी आह्लाद से खुश होते-होते उनकी आंखों में आंसू भर आए थे।

जब उत्साह का तूफान कुछ शांत हुआ तो मालती जी ने बेहद भरे हुए गले से कहा—मैंने अपने पति को लाकर आपकी अदालत में खड़ा कर दिया। अब मेरे बारे में, मेरे चरित्र के बारे में, मेरी बच्ची के बारे में आप जो कुछ पूछना चाहें···इन्हीं से पूछ लीजिए! मेरे पास सबसे बड़ा जवाब यही हैं! मेरे पति·· और ये आपके सामने मौजूद हैं—इससे ज्यादा मैं और क्या कह सकती हूं। एक औरत अपने चरित्र पर लगे इल्जाम का सबसे बड़ा सबूत क्या दे सकती है! कहते-कहते मालती जी का गला रुंध गया था। उनसे बोला नहीं जा रहा था।

लल्लू बाबू ने तपाक से मेरी ओर देखा—देख क्या रहे हो, एक गिलास पानी लाओ भइये।

जब तक मालती जी ने पानी पिया और आंसू पोंछे, तब तक मिर्जा सा· माइक पर खुद आ गए और दहाड़ने लगे—मैं अपने मुल्क की सदियों पुरानी कल्चर और अपने इस शहर की शानदार तवारीख के नाम पर धब्बा लगाने वालों के मुंह पर थूकता हूं और उन्हें आगाह करता हूं कि आइंदा वे ऐसे जलील हथकंडे काम में न लाएं···नहीं तो उनका हश्र अच्छा नहीं होगा। मेरे शहर की जनता उन लोगों को फाड़कर खा जाएगी जो औरतों और बहनों के पाक नामों पर कीचड़ उछालने की कोशिश करेंगे···

—'मालती जी ! जिन्दाबाद !' जनता के बीच से जयघोष आया !

उसी जयघोष में तमाम आवाजें मिल गईं और दूर पर दिखाई पड़ा कि ऐन वक्त पर लाला दीनानाथ अपने संगी-साथियों के साथ नारे लगाते उसी रास्ते से चले आ रहे हैं, जिससे मालती जी आई थीं। उनके कार्यकर्ता झण्डे उठाए हुए थे। जनता सहमी-सी रह गई। समझ ही नहीं पाई कि यह क्या माजरा है। हमारे वालंटियरों ने उन्हें सुरक्षा दे रखी थी। आखिर दीनानाथ जी मंच पर आए। सबने लपककर उनका स्वागत किया और कुछेक क्षणों की आपाधापी के बाद लल्लू बाबू ने माइक पर घोषणा की—अब एक जबरदस्त ऐलान और है। हमारे सम्माननीय बुजुर्ग और नेता लाला दीनानाथ इसी मंच से आपसे कुछ कहेंगे। लाला दीनानाथ जी !

दीनानाथ जी आए और अपने लहजे में बोलने लगे—बहिन मालती जी और उपस्थित दोस्तो ! मुझे अधिक कुछ नहीं कहना है। मात्र इतना है कि मालती जी जैसी निर्भीक और बुद्धिमान तथा साहसी नेता के हाथों में हमारा भविष्य सुरक्षित है ! जो कुछ मैं आप सबके लिए कर सकता हूं, उससे अधिक मालती जी कर सकती हैं, इसलिए मैंने यह तय किया है कि मैं चुनाव नहीं लड़ूंगा'''अब नाम तो वापस नहीं लिया जा सकता, पर मैं अपने सारे कार्यकर्ताओं और समर्थकों से विनती करता हूं कि वे अब मालती जी का साथ दें। जो वोट वे मुझे देने वाले थे, वे मालती जी को दें। मैं अब उनके साथ हूं—और साथ रहूंगा ! मालती जी की जीत हम सब की जीत है ! नमस्कार''

—'मालती जी ! जिंदाबाद !' भीड़ फिर गरजी'''तालियों की आवाज से कान के पर्दे फटने लगे। लाला दीनानाथ के लिए लल्लू बाबू ने मालती जी के पास वाली वह कुरसी खाली करवानी चाही, जिस पर अभी तक जग्गी बाबू बैठे थे।

—आप मेरी कुर्सी पर आ जाइए ! लल्लू बाबू ने जग्गी बाबू से कहा और लाला दीनानाथ के हाथ पकड़कर धन्यवाद देते हुए उन्हें खींच कर ले आए और जग्गी बाबू की दुबारा खाली की गई कुर्सी पर उन्होंने

लाला दीनानाथ को बैठा दिया।

लल्लू बाबू लाला दीनानाथ की कुर्सी के हत्थे पर झुके हुए कुछ बात करने लगे तो उनका कंधा जग्गी बाबू के लगा। जग्गी बाबू ने धीरे-से खुद ही लल्लू बाबू के लिए कुर्सी खाली कर दी—आप बैठिए···बात कीजिए···मैं इधर बैठ जाऊंगा···कहते हुए जग्गी बाबू कुछ खिसियाए-से कोने वाली कुर्सी पर बैठ गए।

मैंने बहुत तकलीफ से देखा था। जग्गी बाबू की जगह फिर बीच से कोने की तरफ हटने लगी थी। लेकिन मैं क्या कर सकता था! गनीमत यही थी कि नरसी सेठ इस बीच चुपचाप उठकर चले गए थे।

अब प्रोग्राम के नाम पर कुछ खास नहीं रह गया था। भीड़ उठने लगी थी तो मिर्जा साहब ने माइक से अगली सभाओं की सूचना देनी शुरू कर दी थी।

थके-हारे हम लोग भी लौट आए थे। लाला दीनानाथ मालती जी के साथ उन्हीं की कार में होटल तक गए थे। जग्गी बाबू को लल्लू बाबू ने मेरे साथ बैठा दिया था। जग्गी बाबू न खुश थे, न नाराज···वे वीतराग थे।

हम लोग लौटे तब तक अंधेरा हो चुका था। जग्गी बाबू ने रास्ते में कोई खास बात नहीं की। सबके चेहरों पर जीत का संतोष था। कुछ ऐसा भाव कि आज मैदान सर कर लिया है। और यह भाव गलत भी नहीं था। हुआ यही था। सचमुच जनता पर बेहद असर पड़ा था। विरोधियों को हमने पीट लिया था। होटल में आकर उतरे तो मैं जग्गी बाबू के साथ ऊपर चला गया था।

जग्गी बाबू नाखुश नहीं थे। पर वे समझ ही नहीं पा रहे थे कि जो कुछ हुआ, वह कैसे हुआ। मैंने उनसे धीरे से कहा—चुनाव खत्म हो जाएं, तो मेरे खयाल से आप और मालती जी पचमढ़ी हो आइए···

—क्यों? उन्होंने बिना समझे-बूझे ही पूछ लिया था।

—या लिली को यहां बुला लीजिए!

वे धीरे से मुस्कराए। फिर बोले—कुछ समझ में नहीं आता··· हमारी ज़िन्दगी का क्या रूप हो सकता है? आखिर क्या शक्ल होगी?

गुरूसरन जी, ज़िंदगी एक बार बदशक्ल हो जाए तो बहुत मुश्किल होता है…उसे दुबारा वही पुराना सुन्दर रूप देना! मेरी समझ मे कुछ भी नही आता…

इसी समय एक बेयरा नीचे से तार लेकर आ गया था…तार लिली का था—पापा! मैं यहां पूरे होस्टल में अकेली हूं। मन नहीं लगता है। आप आकर मुझे ले जाइए!

उन्होंने तार मेरे हाथ मे दे दिया। वे बहुत उदास हो गए थे। मैंने बात बदलनी चाही, बोला—जिस तरह बातें आज घटित हुई हैं, उन्हीके बलपर कह रहा हूं जग्गी बाबू, कि लिली के पास या तो आप दोनो चले जाइए या उसे यहां बुला लीजिए—यही ठीक होगा।

मुश्किल यह है गुरूसरन जी, कि जैसे बाहरी दुनिया मे बातें घटित होती हैं, वैसी आपसी दुनिया में नही होती। मेरे लिए वापस लौटना संभव नही है…मेरा मन अपनी तरह रहते-रहते इसी तरह रहने को तैयार हो चुका है…जग्गी बाबू ने कहा।

मैंने यही उचित समझा कि उन्हें उनके खयालो के साथ छोड़ दिया जाए, ताकि वे कुछ और सोच सकें और किसी नतीजे पर पहुंच सकें तो अच्छा हो।

मैं कार्यालय में आया तो सब जुटे हुए थे। लल्लू बाबू का भाषण चल रहा था—मुझसे पूछिए तो इलेक्शन तो जीत लिया, भइये! अब रह क्या गया है! सब की जमानतें जब्त न हुई तो मुझसे कहना…चन्द्रसेन का तो सामान नीलाम होगा, देख लेना। न हो तो मुझसे कहना भइये! फिर उन्होंने धीरे से मुझसे कहा—इन लोगों को काटो भइये! काफी रात हो गई, अपने-अपने घर जाएं। जरा से नमकीन का इंतजाम हो जाए तो मजा आ जाए भइये!

जैसे-जैसे मालती जी की जीत निश्चित होती गई, उनके आसपास भीड़ बढ़ती गई। अब चुनाव अभियान ने पूरा ज़ोर पकड़ लिया था। अखबार वाले, जो हमेशा विरोध में ही लिखा करते थे, उनके टोन में भी फरक आ गया था। लेकिन लल्लू बाबू सतर्क थे—इत्मीनान नहीं करना चाहिए भइये! इलेक्शन का ऊंट कब किस करवट बैठ जाए, कुछ पता नहीं होता···इसे घेरकर खड़ा रहना चाहिए···

विरोधी दलों और उम्मीदवारों के काफी कार्यकर्ता टूट-टूटकर हमारी ओर आ रहे थे, पर लल्लू बाबू की दृष्टि सबको देख रही थी। मिर्ज़ा साहब काफी बड़े जत्थे को लेकर आए थे—ये सब अपने साथ शामिल होने को तैयार हैं···

मालती जी बहुत खुश हुई थीं, पर लल्लू बाबू ने तत्काल आग्रह किया था—सोच-समझकर तय कीजिए। अब इस वक्त नये लोगों को शामिल करना मेरे खयाल से ठीक नहीं होगा, हां! ये लोग भीतर से तोड़-फोड़ करने की साजिश भी कर सकते हैं···

—तो जो आप ठीक समझिए कीजिए···मालती जी ने सारी ज़िम्मेदारी लल्लू बाबू पर डाल दी थी। लल्लू बाबू के रवैये से मिर्ज़ा साहब थोड़े दुखी भी हुए थे, पर वे भी जानते थे कि चुनाव तक लल्लू बाबू की बात ही चलेगी। इसलिए मिर्ज़ा साहब ने और आगे की सोची—क्यों लल्लू बाबू, जीतने के बाद किस तरह के जशन का इंतज़ाम किया जाए?

—नाच-गाना करवाइए! क्यों भइये! उन्होंने मेरी तरफ देखकर आंख मारी।

—पब्लिक फंक्शन की बात कर रहा हूं।

—नरसी सेठ को पटाइए···सब कार्यकर्ताओं की एक शानदार दावत हो जाए तो क्या कहने! लल्लू बाबू ने सुझाव दिया।

एक मुशायरा करवा दिया जाए तो कैसा रहे? मिर्ज़ा साहब ने समर्थन चाहा, तो लल्लू बाबू ताड़ गए, बोले—लगता है, आपने कोई नज़्म कही है!

और मिर्ज़ा साहब झेंप गए, लेकिन उन्होंने बात को संभाला—शहर में बहुत से शायर हैं, यह कहिए कि भोपाल शायरों का शहर है···हर

गली-कूचे में शायर पड़े हुए हैं, सभी चाहेंगे कि मालती जी की जीत को शानदार तरीके से मनाया जाए और उन्हें भी उसमें शामिल होने की खुशी हासिल हो…

—तो जो ठीक समझिए, कर लीजिए। हमें तो आप एक शाम कव्वाली सुनवा दीजिए…चाहे मेरे अकेले सुनने का ही इन्तज़ाम हो जाए! क्यों भइये…

—यह भी हो जाएगा! तो चलता हूं…और मिर्ज़ा साहब उठकर चले गए। लल्लू बाबू ने खुराक ली और बोले—नमकीन का इंतज़ाम नहीं हुआ, भइये!

सुबह से फिर हलचल शुरू हो गई। फोन बराबर बजता रहा। तरह-तरह के लोग जानकारी चाहते रहे और प्रशंसा करते रहे। इसके बावजूद मैंने यह अनुभव किया कि अब राजनीतिक दांव-पेंच और गहरे उतर गए थे। वे सतह से बहुत नीचे पहुंच गए थे। और कुछ गम्भीर मंत्रणाएं चालू हो गई थीं। मालती जी ने अगले दिन के कार्यक्रम ऐसे रखे थे, जो खास नहीं थे। ज्यादातर लोग उनसे अकेले में ही मिल रहे थे। यानी बाहरी प्रदर्शन का काम शायद उतना ज़रूरी नहीं रह गया था। लल्लू बाबू के मुताबिक हमें बाहरी काम को और ज़ोर-शोर से चलाना था, पर वह सब अब मुख्य लोगों के सहारे नहीं, बल्कि दूसरे और तीसरे नंबर के लोगों को सौंपा जा रहा था।

प्रत्येक पोलिंग बूथ के लिए पोलिंग एजेंट नियुक्त करने का काम मुझे सौंप दिया गया था। महिलाओं को निकालकर लाने और वोट डलवाने के लिए औरतों की एक पूरी फौज खड़ी हो गई थी। उसका इंचार्ज एक खुर्राट महिला को बना दिया गया था। गांव के इलाके में बनियों की वसूली करने वाले घूम रहे थे, जिसका लल्लू बाबू ने विरोध किया था। यह बात सही भी थी, वसूलयाबी करने वालों को सभी घृणा से देखते हैं, इसलिए जगतसिंह को खासतौर से सिहोर गांव के इलाके में भेजा गया था कि वह जाकर दूसरे ज़िम्मेदार लोगों को खोजे और काम पर लगाए।

अभी दोपहर ही हुई थी कि एक ग्रामीण-सा लगता आदमी साइकिल पर आया था। तमाम झण्डे लगाए और अपनी पूरी गृहस्थी साइकिल में

लटके झोलों में भरे, उलझे बाल और बदहवास आंखें···मैंने उसे देखा तो पहचाना-सा लगा। यह वही आदमी था जो सिहोर गाव में मैंने देखा था। जिसने भरी सभा मे मालती जी से कहा था—खाते वक्त सब अंगुलियां बरोबर हो जाती हैं, और जिसे सभा मे से जगतसिंह उठा ले गया था।

आते ही उसने सवाल किया—सरदार भगतसिंह कहां हैं? मैं उनसे मिलना चाहता हूं! उस पागल की आंखें जल रही थी।

मैं सकपकाया। वह चीखा—बीबी सी आई, ई आई आर···जलियां-वाला बाग···काकोरी ट्रेन डकैती···इलाहाबाद! चन्द्रशेखर आजाद कहां हैं? मुझे अभी उनसे मिलना है।

सब लोग जमा हो गए थे, जगतसिंह ने उस पागल को समझाया—आप बैठिए, अभी सब आ जाएंगे···

—कौन-कौन आएगा? वह पागल चीखा।

—सब आ जाएंगे···भण्डारी जी एक प्याला चाय दीजिए। जगत-सिंह ने आवाज लगाई।

—कहां है फिरंगी की तोप? कहां है मेरा सुभाषचन्द्र बोस? वह बूढा फिर चीखा—मुझे सुभाषचन्द्र बोस से मिलना है। उन्हें लेकर मेरे पास आओ···।

—आप खामोशी से बैठेंगे या नहीं? जगतसिंह ने सख्त पड़ते हुए कहा।

—क्या? खामोश। मैं अब खामोश नहीं बैठूगा। तुम सबको गोली से उड़ा दूगा। कहते हुए उस पागल बूढ़े ने एक तमंचा निकाल लिया था—और क्रांतिकारियों की तरह सबकी तरफ दिखाते हुए चीखने लगा था—हरामजादे! सबको भूनकर रख दूगा।···मक्कारो, सीने से गोलियां पार कर दूंगा।

सब लोग सकते मे आ गए थे, जगतसिंह ने बात बिगड़ती देखी तो लपककर उस बूढ़े को जोर से एक मुक्का मारा था, वह बिलबिलाता हुआ जमीन पर गिर गया था। कुछ देर बाद वह डरा हुआ-सा उठकर अपनी साइकिल लेकर दीवार के सहारे चुपचाप बैठ गया था और फूट-फूटकर रोने लगा था।

जगतसिंह ने ही बताया था कि वह बूढ़ा कभी-कभी पागलपन की बातें करता है। कुछ देर के लिए दिमाग चल जाता है, फिर ठीक हो जाता है। जब ठीक हो जाता है तो अक्लमंदी की बातें करता है। वह बस यों ही अपनी साइकिल पर झण्डा लगाए और झोले लटकाए इधर-उधर घूमता रहता है। भूख लगती है तो बकता है।

मुझे नहीं मालूम, शाम की मीटिंग कैसी हुई, क्योंकि मैं गांवों की ओर चला गया था। लौटा तो देर हो गई थी। हाल-चाल बताने के लिए ऊपर गया तो बिंदा मिला, उसने बताया—मालती जी कुछ जरूरी कागज देख रही हैं।

आसपास फैली महक से मैं समझ गया था कि इस वक्त मिलना मुश्किल होगा। लेकिन बिंदा ने बैठा लिया। रोशनदान की झिरी से, जहां से रोशनी फूट रही थी, सिगरेट का धुंआ तैरता हुआ आ रहा था। मैंने दरवाज़े की ओर देखा—मालती जी चश्मा लगाए थीं, शाल कंधों पर पड़ा था। कुछ कागज भी पलटती जा रही थीं और सिगरेट भी पीती जा रही थी। एश-ट्रे बगल में रखी थी, उनका हाथ राख झाड़ने के लिए एश-ट्रे तक गया था, जरा-सा ठिठका था, फिर वे खिड़की के पास गई थीं, वहीं सिगरेट की राख झाड़कर उन्होंने दो कश और लिए थे और सिगरेट बुझाकर खिड़की से नीचे फेंक दी थी। एश-ट्रे मेज़ से उठाकर साइड-टेबुल पर रख दी थी और कागज़ देखने में फिर मशगूल हो गई थीं।

मैं चुपचाप उठ आया था। गलती से लिफ्ट ऊपर चला गया तो सोचा जग्गी बाबू को भी देखता जाऊं। वे जाग रहे थे। दोनों हथेलियां सिर के पीछे टिकाए चुपचाप लेटे थे। मुझे देखते ही उठकर बैठ गए। बोले—मैं आपको ही याद कर रहा था, सोच रहा था कि फ़ोन करके

बुला लूं।

—बताइए···मैं हाजिर हूं ! मैंने कहा।

—अब मैं परेशान हूं !

—क्यों, क्या हुआ ?

—मैं भी सब बातें साफ कर लेना चाहता हूं ···इस तरह त्रिशंकु की तरह बीच में लटका नहीं रहना चाहता। आखिर इस सारे नाटक का मतलब क्या है ? जग्गी बाबू बोले।

—किस नाटक का ?

वे उठे और झटके से उन्होंने एक पैकेट खोलकर मेरे सामने कर दिया—यह सब क्या है ? यह किसलिए भेजा गया है ?

मैंने देखा—उसमें लिली के लिए कुछ कपड़े थे। कुछ किताबें और कुछ स्वीट्स।

—यह किसलिए भेजा गया है ? यह क्या तमाशा है ?

मैं जग्गी बाबू का गुस्सा भांप गया था, मेरा चुप रहना ही बेहतर था। मैंने अपनी असहमति जताई थी और इतना ही कहा था—मैं आज इधर था नहीं। मैं गांव की तरफ गया हुआ था। अभी कुछ देर पहले ही वापस आया। मालती जी की आपसे मुलाकात हुई थी या···

—यह जगतसिंह लाया था ! ···यह किस चीज का इनाम है ? उन्होंने ऊंची आवाज में मुझसे पूछा था।

—बहुत बड़ी गलती की है मालती जी ने···मुझे कुछ वक्त दीजिए मैं उनसे बात करूंगा···मैं सकपकाकर कह गया था।

—आप क्या बात करेंगे, बात मैं करूंगा ! वे गुस्से में ही बोले।

—मेरे ख्याल से आप कुछ दिन और रुक जाएं—इलेक्शन हो जाए तो सब बातें खुलकर कर ली जाएं !

—क्यों ! हर बात उनकी सुविधा, उनकी जरूरत और उनके वक्त का इंतजार क्यों करती रहे ? किसलिए ? अब हर बात मालती की जरूरत और वक्त के मुताबिक नहीं होगी···मेरी अपनी जरूरत और वक्त के मुताबिक होगी ! जग्गी बाबू ने होंठ चबाते हुए कहा था।

—मेरे ख्याल से अगर आप चार-पांच दिन और रुक जाएं तो बेहतर

है। जिस दिन वोट पड़ेंगे, सब सन्नाटा होगा, वे एकदम खाली होंगी··· लोग भी नहीं होंगे, तब ठीक रहेगा। मैंने उन्हें समझाया—इतनी-सी मेरी बात मान लीजिए।

वे बंद पिंजरे में शेर की तरह टहलते रहे। मेरे लिए उठकर आना मुश्किल हो रहा था। अंधेरा चारों तरफ भरा हुआ था। उनके चेहरे पर रोशनी की लकीर आती और हट जाती थी। जग्गी बाबू की तकलीफ बहुत सही और गहरी थी। लेकिन किया क्या जा सकता था? मैं यह भी नहीं चाहता कि मालती जी का सारा काम अंतिम दिनों में बिगड़ जाए। 'मैं सुबह आऊंगा' कहकर मैं उठने लगा था।

—जाइए, आप भी आराम कीजिए! जग्गी बाबू ने कहा था—मैं कोई बात नहीं करूंगा। क्यों करूं? खामखाह इस मामले में पड़ गया। हूं···मुझे क्या जरूरत है···कहकर वे बिस्तर पर लेट गए।

मैं भी उठकर चला आया। चलते-चलते यों ही कह आया था—मैं सुबह आऊंगा।

यों सुबह जग्गी बाबू से मिलने का कोई कारण तो नहीं था, पर कह आया था, इसलिए गया तो देखा···एपार्टमेंट में ताला बंद है। नीचे उतर कर आया। असिस्टेंट मैनेजर से पूछा तो उसने बताया वे कहीं गए हैं।

—कहां?

—यह तो पता नहीं। शायद अपनी बच्ची के पास पचमढ़ी गए हों। और कहीं वे जाते भी नहीं।

—इसका मतलब है, छुट्टी लेकर गए हैं!

—जी!

मैं सुन्न रह गया। हालांकि चुनाव-बुखार काफी तेज था, पर मेरा हाल बुरा हो गया था। एक तो काम का बोझ—ऊपर से यह जबरदस्त झटका! मैं कार्यालय में आकर चुपचाप लेट गया था। कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था। जग्गी बाबू ने यह क्या किया था। कहीं वे त्यागपत्र देकर तो नहीं चले गए? कहीं कुछ और तो नहीं कर बैठेंगे? अपने सम्मान और अपनी अकेली दुनिया को लेकर जीनेवाले आदमी की यही तो मुश्किल

होती है। मुझे समझ में नहीं आ रहा था कि मालती जी ने जगतसिंह के हाथों लिली के लिए वह पैकेट क्यों भिजवाया था। क्या मालती जी ने जग्गी बाबू और लिली को कपड़ों और कुछ उपहारों से तौलना चाहा था। ये उपहार क्या बदसूरत उपहार में नहीं बदल गए थे ? मैं चुपचाप पड़ा सोच ही रहा था कि लल्लू बाबू ने पास से गुजरते हुए पूछा—थक गए भइये ? आज शाम तुम भी एक खुराक लेना···

मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा था। तभी साइकिल की घंटी बजी और दरवाजे के पार वही बूढ़ा पागल दिखाई दिया। उसने वहीं से आवाज लगाई—जगतसिंह जी! हमारे साथ गरीबी मिटाने चलेंगे? आइए, चलिए।

इस वक्त वह बिलकुल ठीक-ठीक बोल रहा था।

इतने में जगतसिंह आ गया था। उस बूढ़े को देखते ही बोला—आप फिर आ गए?

बूढ़े ने बिलकुल सामान्य आदमी की तरह कहा—मैं आपका साथ देने आया हूं। बहुत विचार किया। मैंने बहुत विचार किया और तय किया कि एक बार आपका साथ और दिया जाए···शायद गरीबी इस बार मिट सके! इस बार और देखता हूं···नहीं तो तमंचा मेरे पास है ही···भगतसिंह, आजाद, बिस्मिल मेरे साथ हैं ही···वह बूढ़ा फिर बहकने लगा था।

—आप उधर जाकर चाय पीजिए। कुछ नाश्ता कर लीजिए···जगतसिंह ने कहा और उन्हें भण्डारी वाले कोने की ओर ठेलकर भीतर आया, उसे कोई फोन करना था। फोन नहीं मिला तो उठकर जाने लगा। मैंने उसे वहीं रोक दिया। बिना पूछे मेरा दिल नहीं मान रहा था। मैंने पूछा—क्यों जगतसिंह, जग्गी बाबू को वह उपहारों का पैकेट तुम दे आए थे?

—हां···क्यों? लल्लू बाबू ने कहा था। जगतसिंह बोला।

—लल्लू बाबू ने कहा था? पैकेट किसने दिया था, मालती जी ने या लल्लू बाबू ने? मैंने पता किया।

—लल्लू बाबू ने दिया था। यहीं दिया था। मुझसे कहा, ऊपर जाकर

दे आओ और कह देना मालती जी ने भेजा है ! क्यों, क्या हुआ, जगतसिंह की उत्सुकता जागी ।

—कुछ नहीं। मैं सिर्फ यह जानना चाहता था कि वह मालती जी ने भिजवाया था या नहीं···मैंने कहा।

—ठीक-ठीक मुझे मालूम नहीं। मालती जी ने मेरे सामने तो दिया नहीं, लेकिन लल्लू बाबू ने जब कहा कि कहना, मालती जी ने भेजा है, तो उन्होंने ही भेजा होगा। और कौन भेज सकता है ! आप मालती जी से दरयाफ्त कर लीजिए···कौन-सी बड़ी बात है···कहते हुए जगतसिंह चला गया।

मेरी उलझन और बढ़ गई। यह वक्त भी ऐसा नहीं था कि मालती जी से पूछता। वह बिगड़ पड़ती—'यह बात करने का यही मौका है ? जो काम कर रहे हैं, पहले उसे देखिए।'

रह-रहकर मुझे क्षत-विक्षत जग्गी बाबू का ध्यान आ रहा था। वे एकाएक बिना बताए चले गए। पता नहीं, क्या सोचकर गए होंगे ! पच-मढ़ी ही गए हैं या कहीं और·· लौटकर आएंगे या नहीं ? आएंगे भी तो कब। मुझे यही लग रहा था कि सहने की कोशिश करते हुए भी भीतर से किसी भी स्थिति के लिए तैयार नहीं थे। इसलिए अंततः वे बर्दाश्त नहीं कर पाए। लिली की छुट्टियां थीं। वह अकेली होस्टल में होगी, यह बात भी लगातार उन्हें दुःख देती रही होगी और फिर लिली का तार भी आया था। रुकना मुश्किल हुआ होगा उनके लिए। हो सकता है, वे लिली को लेकर कहीं और चले जाएं···यह तो तय लग रहा था कि वे तब तक लौटकर नहीं आएंगे, जब तक यह धूमधाम खत्म नहीं हो जाती···यानी मालती जी चली नहीं जातीं।

यह सब बहुत दुःखद था।

मुझे उम्मीद तो नहीं थी। लेकिन आते-जाते मेरी निगाहें यही खोजती रहती थीं कि कहीं वे आ न गए हों।

दूसरे दिन मैं ताल की निचली सड़क की ओर गया था जहां मंत्रियों के बंगले हैं···वहां जग्गी बाबू से मिलने की कतई उम्मीद नहीं थी, लेकिन

एक पुलिया के पास देखा—तांगा खड़ा है, और लिली का सामान रखा है, और लिली तथा जग्गी बाबू दोनों ताल-किनारे खड़े डूबता हुआ सूरज देख रहे हैं। ताल का पानी काफी उतरा हुआ था···वहां दो नावें पड़ी थीं। लिली उधर भाग गई थी। जग्गी बाबू उसे आवाज़ दे रहे थे। तभी मैंने उन्हें आवाज़ दी—अरे जग्गी बाबू, आप यहां?

—अरे आप! हां···लिली को पचमढ़ी से ले आया हूं। स्टेशन पर उतरकर ज़िद करने लगी, तांगे से चलिए पापा···ताल का चक्कर लगाते हुए चलिए पापा···बहुत शैतान है। ज़रा देखूं उसे, कहीं नाव पानी में न उतार ले···कहते हुए जग्गी बाबू किनारे की ओर भागते चले गए।

मुझे जल्दी थी। मैं बाप-बेटी को कुछ क्षण देखता रहा···वे दोनों दौड़ रहे थे। लिली आगे-आगे, जग्गी बाबू पीछे-पीछे···लिली की भोली आवाज़ आ रही थी—पापा, हमें पकड़िए···पापा, हमें पकड़िए···

तांगे वाला उन्हें अचरज और प्यार से देख रहा था।

मैं उन्हें पलट-पलटकर देखता चला आया। वे दोनों अपने में डूबे हुए थे। उन्हें किसी की परवाह नहीं थी। वे डूबते हुए सूरज को भी भूल गए थे। भागते-भागते वे दोनों काफी दूर निकल गए थे। ताल का पानी सुनहला होकर लहरा रहा था। हवा धीरे-धीरे चल रही थी। किनारे की घास सरसरा रही थी। लिली के खुले हुए रेशमी बाल उड़ रहे थे।

काफी लम्बा चक्कर काटकर जब मैं वापस होटल पहुंचा, तब तक जग्गी बाबू और लिली नहीं लौटे थे। रात हो गई थी। मैं मालती जी के पास चला गया। उनसे कुछ ज़रूरी बातें करनी थीं। मन में आया भी था कि उन्हें बता दूंगा : लिली आई हुई है, पर मैंने जानबूझकर नहीं बताया···मालती जी का संतुलन बिगड़ सकता था और जग्गी बाबू को बुरा लग सकता था।

वोटिंग के लिए तीन दिन बाकी थे। असल में तो सिर्फ दो दिन। परसों बारह बजे रात से सब शांत हो जाना था। प्रचार-कार्य समाप्त हो जाना था। इसलिए ये आखिरी दो दिन थे। प्रदर्शन और प्रचार का काम भी जोरों पर था और भीतर ही भीतर ठोस काम भी चल रहा था। मालती जी उसी में बहुत व्यस्त थी।

लिली बहुत प्यारी बच्ची थी। सुबह मन नहीं माना तो चुपचाप उठकर उसे देखने चला गया। वह बैठी अपने पापा को अखबार की खबरें पढ़कर सुना रही थी। पापा का चश्मा लगाए हुए—इलेक्शन फीवर रीचेज हाइएस्ट पिच! वायलेंस इन गुजरात। सुनिए पापा···आयल फाइंड इन बाम्बे हाई···

—अच्छा, चश्मा उतार और देख, चाचा जी आए हैं! जग्गी बाबू ने उसे टोका। चश्मा लगाए-लगाए ही उसने शैतानी से मुझे देखा—नमस्ते अंकल!

—नमस्ते बेटे! कहकर मैंने उसे प्यार किया और बैठने लगा तो जग्गी बाबू ने कुर्सी पर बिखरी लिली की तमाम चीजें बटोरते हुए कहा—पूरी गृहस्थी उठा लाई है! ओह! यह टोपी देखी···गुरुसरन जी···यह लिली मेरे लिए लाई है।

रंगीन सूत की फुंदनेदार टोपी। जग्गी बाबू ने लगाई तो लिली ने आंखें चमकाईं—अच्छी है न पापा!

—बहुत बढ़िया···अच्छा अब तुम तैयार हो जाओ···हूं, जग्गी बाबू ने कहा तो लिली चश्मा उतारकर गई और कंघा उठा लाई···हमारे बाल बनाओ पापा।

वह पापा कुछ इस प्यारे तरीके से कहती थी कि एकाएक प्यार उमड़ने लगता था। जग्गी बाबू कंघे से उसके बाल सुलझाने लगे··· सुलझाते-सुलझाते बोले—मैं जानबूझकर इसे यहां ले आया हूं।

—क्यों पापा? लिली ने सवाल किया।

—कुछ नहीं बेटे। यह अपना घर नहीं है? जग्गी बाबू ने कुछ इस तरह से कहा कि लगा, वे बात बदलना चाहते हैं।

—तभी बेयरा एक ट्रे में नाश्ता लेकर आ गया—गुड मार्निंग लिली

बेबी!

—मार्निंग रामसिंह अंकल! गुड मार्निंग…लिली चहकी।

—ये रहा लिली बेबी का दूध! बेयरे ने जैसे छेड़ते हुए कहा।

—देखिए पापा…हम दूध नहीं पिएंगे…रामसिंह अंकल को समझाइए! लिली ने रूठते हुए कहा।

—पहले गिलास भी तो देखो…उसमें क्या है! जग्गी बाबू ने रामसिंह के हाथ से संतरे के रस का गिलास लेकर सामने कर दिया। लिली मुक्त मन से मुस्करा दी।

—अच्छा, मैं अभी चलूं…मैंने कहा और लिली को प्यार करके मैं चला आया।

काम तो मैं सब करता रहा पर आंखें हमेशा लिली के लिए सतर्क रहीं। इधर-उधर वह दिखाई पड़ती रही। अपने अकेलेपन में मस्त वह अपने साथ रहने की आदी हो गई थी। कभी वह टैरेस की दीवार पर लटकी साबुन के बुलबुले छोड़ती नजर आती…कभी काउंटर के पार पड़ी कुर्सियों पर पैर हिलाती बैठी रहती। कभी हमारे कॉटेज के पास वाले लॉन में तितलियां पकड़ने आती।

गनीमत हुई कि वोटिंग शांत ढंग से हो गई। दंगे-फसाद की उम्मीद तो थी ही। लेकिन हम भी तैयार थे। लल्लू बाबू ने पूरी तैयारी कर रखी थी। ज्यादा खतरा गुलशेर अहमद के आदमियों की तरफ से था। गुलशेर ने इस बीच जमकर साम्प्रदायिक जहर फैलाया था। हम लोग सतर्क थे, पर कहा क्या जा सकता था? कब क्या हो जाए, किसी को पता नहीं होता। चन्द्रसेन तो रस्सी का सांप थे। यह बात चुनाव-अभियान के ज़ोर पकड़ते-पकड़ते साफ हो गई थी। फिर भी वे निकटतम प्रतिद्वन्द्वी थे।

वोटिंग शाम पांच बजे बंद हो गई। हम लोग लस्त-पस्त पड़ गए।

किसी को कुछ भी होश नहीं था। सब लोग घोड़े बेचकर सो गए थे। सुबह नौ बजे से कलक्टरी में गिनती होने वाली थी, पर हमारा कोई एजेंट वहां नहीं पहुंचा था। आखिर पोलिंग आफीसर का फोन आया और जैसे-तैसे तैयार होकर लल्लू बाबू भागे। कुछ देर बाद लोग पहुंच गए। गिनती शुरू हो गई थी। कलक्टरी के बाहर लोगों की भीड़ जमा थी। वहां पहुंचकर यह अंदाज हुआ था कि चन्द्रसेन और गुलशेर अहमद के लोग भी काफी उत्साहित थे। ऐसी बात नहीं थी कि उन्हें जीतने की उम्मीद न हो।

अलग-अलग उम्मीदवारों के लोग कलक्टरी की चहारदीवारी के बाहर पेड़ों की छाया में जमा थे। गिनती चलने के कारण गारद का पहरा भी उस हिस्से में था। चन्द्रसेन के लोगों ने चाय की दुकानों से किराये पर तख्त लेकर अपनी गद्दी नीम के पेड़ के नीचे कायम कर ली थी। गुलशेर अहमद के मजमे में शरबत बंट रहा था।

करीब दो घंटे बाद चार-पांच आदमी उस कमरे के दरवाजे पर दिखाई पड़े जहां काउंटिंग हो रही थी। लल्लू बाबू भी उनमें थे। वे बहुत खुश नहीं थे। शेष लोग दूसरे उम्मीदवारों के एजेंट थे। बाहर खड़े लोगों के गिरोहों ने उन्हें घेर लिया—क्या हाल है? कितनी काउंटिंग हुई?

चन्द्रसेन के एजेंट ने गर्व से कहा—अब तक सात हजार की काउंटिंग हुई है। चन्द्रसे[illegible] जी दो हजार से आगे हैं।

—च[illegible]सेन जिंदाबाद! चन्द्रसेन जिंदाबाद! कुछ नारे लगे और चन्द्रसेन के मजमे में चाय के कुल्हड़ और गिलास चलने लगे। पत्तों पर भजिया भी आने लगी।

गुलशेर अहमद के मजमे में शरबत के गिलास रुक गए।

हम लोग खामोश थे। अभी कुछ कहा नहीं जा सकता था। अभी तो शुरुआत थी। ऊपर-नीचे तो लगा ही रहता है। डेढ़ लाख की गिनती में बहुत बार हिचकोले लगने थे।

वह साइकिल वाला बूढ़ा पागल भी एक जगह खड़ा था। कुछ देर बाद उसने भी मजमा जोड़ लिया था। वह बोल रहा था—गांधी जी ने

गोली क्यों खाई थी ? बोलो भाइयो ! गांधी जी ने गोली क्यों खाई थी ? भगतसिंह फांसी पर क्यों चढ़े थे ? चन्द्रशेखर आजाद क्यों शहीद हुए थे ? सुभाषचन्द्र बोस ने बाना क्यों बदला था ? बोलो, मुझे बताओ··· और इसके बाद उस बूढ़े पागल ने झोले से खंजड़ी निकाली और कान पर हाथ रखकर आलाप लेने लगा—

मेहनतकश लोगो, सावधान···
मैं डंके की चोट बताता हूं···
कुरसी है इनका परम लक्ष्य
कुरसी वाला कोई भी हो···
जो कुरसी दे, वह देशभक्त
उजला-काला कोई भी हो···
मेहनतकश लोगो, सावधान···
मैं डंके की चोट बताता हूं···
मजदूर-किसानों में करते
ये, बातें मजदूर-किसानों की
पर खुली वकालत करते हैं
ये धनवानों की, सामंतों की !
कुरसी पर इनको याद नहीं आते
आंसू मजदूर-किसानों के···
मैं डंके की चोट बताता हूं
ये सब, साथी हैं शैतानों के···
मेहनतकश लोगो ! सावधान !

मजमे में लोग अटकने लगे थे कि तभी एक पुलिस वाला आया। बूढ़े पागल ने डरकर उसे देखा और खंजड़ी बजाना बंद कर दिया। पुलिस वाला चिल्लाया—तू फिर आ गया ! चल भाग ! और उसने उसकी खंजड़ी छीनकर एक तरफ फेंक दी। स्टैण्ड पर खड़ी साइकिल को गिरा दिया और बूढ़े को एक ओर धकेल दिया। बूढ़ा हंसता हुआ उठकर खड़ा हो गया। जैसे वह पुलिस वाले को खिजा रहा हो। मजमा बिखर गया।

बूढ़े ने अपना सामान बटोरा और दूर एक पेड़ के नीचे बैठकर बीड़ी पीने लगा।

तब तक एजेंट फिर बाहर आए थे। फिर खबर फैली—पच्चीस हज़ार की काउंटिंग हो गई है। चन्द्रसेन अब पांच हज़ार से लीड कर रहे हैं, गुलशेर अहमद नम्बर दो और मालती जी नम्बर तीन।

लल्लू बाबू पैर पटकते हुए निकले थे। पास आकर गुस्से से बोले—अरे भइये, ज़िला कमेटी वालों ने गच्चा दिया है। रोटियां हमारी तोड़ीं, वोट चन्द्रसेन को दे आए। देखा भइये! गांव के इलाकों की काउंटिंग पूरी हो गई है। वहां तो अपना भट्ठा बैठ गया। पर ये गुलशेर अहमद कहां से इतने भी वोट निकाल ले गया। समझ में नहीं आता, भइये!

चाय का एक गिलास पीकर और जल्दी-जल्दी भजिया खाकर लल्लू बाबू फिर भीतर चले गए। चन्द्रसेन वाले पेड़ के नीचे सबसे ज़्यादा भीड़ हो गई थी। शहर में भी आनन-फानन खबर पहुंच गई थी। कुछ लोग साइकिलों से, कुछ मोटरों से आए थे। कुछ जीपें भी आई थीं…सारी भीड़ चन्द्रसेन वाले पेड़ के नीचे जमा हो रही थी। उनके दल का एक कार्यकर्ता कह रहा था—फूलमालाओं का इंतज़ाम कर लो…जीप में पिटरोल भी भरवा लो…बाबू जी को खबर पहुंच रही है न?

—बाबू जी घर से चल चुके हैं। अभी बाज़ार में अटके हुए हैं। वहीं उन्हें खबर दे दी गई है! किसीने बताया था 'बाबूजी' से उनका मतलब चन्द्रसेन से था। हमारी तरफ सन्नाटा था। सबके चेहरों पर हवाइयां उड़ रही थीं। गुलशेर अहमद के खेमे में रौनक थी।

दोपहर ढलते-ढलते काफी कुछ साफ हो गया था। कुछ ढोल-नगाड़े वाले चुपचाप आकर चाय वालों की बेंचों पर जम गए थे। बीच-बीच में वे ज़रा-सा ढोल बजाकर यह जता देते थे कि बाजे वाले भी मौजूद हैं। जिन्हें ज़रूरत हो वह अभी तय कर ले। कुछ मालिनें भी आ गई थीं—फूलों के हार लिए और गठरी में खुदरा फूल बांधे। दूर से हिजड़ों की एक टोली तालियां चटकाती चली आ रही थी। हिजड़े आकर बाजे वालों के साथ जम गए थे।

गुलशेर अहमद की हालत खस्ता हो चुकी थी। वे चुपचाप एक जीप मे बैठे थे। उनके इर्द-गिर्द सात-आठ आदमी ही थे। बाकी लोग चन्द्रसेन के मजमे में शामिल हो गए थे। कुछ भीड़ अब हमारी तरफ भी बढ़ रही थी। लीड तो चन्द्रसेन ही कर रहे थे पर फर्क सिर्फ ढाई हज़ार का था। पता चला था कि चन्द्रसेन कलक्टरी के पास वाले होटल तक आ गए थे। अब वे तभी कलक्टरी पर आने वाले थे जब जीत की खबर सुनाई पड़ेगी।

मालती जी को हम लोग पेट्रोल पम्प पर लगे फोन से सारी खबर दे रहे थे। आखिरी घंटे बहुत संशय के थे। तभी मैंने देखा, जग्गी बाबू लिली को लिए हुए आए थे। वे उसे सब समझा रहे थे…हिजड़े चन्द्रसेन के मजमे में नाच रहे थे। ढोल वाले धीरे-धीरे भांप रहे थे।

—क्या हाल है गुरूसरन जी? जग्गी बाबू ने पूछा था।

—कुछ कहा नहीं जा सकता…देखिए…

—फिक्र मत कीजिए। जीत जाएंगे आप!

—कोकाकोला मंगवाऊं? मैंने पूछा।

—नहीं-नहीं, इसे बाजार ले जा रहा था। सोचा, यह तमाशा भी दिखा दूं! कहते हुए वे लिली को लेकर चल दिए थे।

चन्द्रसेन के दल मे कुछ लोग मालाएं खरीदकर शामिल हो गए थे। तभी संतोष की मुस्कराहट लिए लल्लू बाबू ने दरवाजे से झांका था। जगतसिंह दौड़कर पास गया था और वहीं से चीखता हुआ भागा था—मालती जी!

हम लोगों ने बिना जाने हुए ही नारा लगाया था—जिन्दाबाद!

सनसनी बढ़ गई थी। पता चला कि मालती जी तीन हज़ार से आगे हो गई थीं। सुनते ही हिजड़े हमारे खेमे में आकर हुड़दंग मचाने और तालियां चटकाने लगे। मालाओं वाले कुछ लोग धीरे से उधर से खिसक-कर इधर हमारी ओर आ गए।

और हमने अपनी जीप सजाने का इन्तज़ाम शुरू कर दिया। बाजे वाले भी हमारी ओर आ गए थे। मैंने दौड़कर पम्प से मालती जी को खबर दी और इसरार किया कि वे कलक्टरी पर आ जाएं। अब सिर्फ

दस हज़ार की गिनती शेष रह गई थी और हमें पूरी उम्मीद थी कि हम जीतेंगे।

और वही हुआ! मालती जी सात हज़ार वोटों से जीत गई थीं। लोग पागल हो गए थे। दमादम ढोल बजने लगे थे। हिजड़े साड़ी का छोर पकड़-पकड़कर फिरकी की तरह नाचने लगे थे। फूलों की बारिश हो गई थी। मालती जी, मिर्ज़ा साहब, लाला दीनानाथ व अन्य तमाम साथियों के साथ आ गई थीं। खुशियों और बधाइयों के दौर के बाद जब उत्साह थोड़ा कम हुआ था तो इधर ध्यान गया।

चन्द्रसेन के कार्यकर्ता नदारद थे। तख्त खाली पड़े थे। चाय के गिलास और कुल्हड़ बिखरे पड़े थे। चन्द्रसेन सात हज़ार वोटों से हारे थे और गुलशेर अहमद की ज़मानत ज़ब्त हो गई थी!

गुलशेर अहमद कलक्टरी के फाटक के सामने खड़े पागलों की तरह चीख रहे थे—हमारी ज़मानत कैसे ज़ब्त हो सकती है! मैं पूछता हूं कैसे ज़ब्त हो सकती है! जब पूरा इलेक्शन जात और मज़हब के नाम पर लड़ा गया है तो मेरे साठ हज़ार मुसलमान कहां गए? मैं पूछता हूं मेरे साठ हज़ार मुसलमान कहां गए? या तो मेरे वो साठ हज़ार मुसलमान मुझे दिए जाएं, नहीं तो ज़मानत का पैसा वापस किया जाए!

उनके तीन-चार साथी ज़ोर-ज़बरदस्ती उन्हें जीप में डालकर ले गए। घर पर जाते-जाते भी वो यही चीखते गए—मेरे साठ हज़ार मुसलमान कहां गए? मेरे साठ हज़ार मुसलमान कहां गए···

फिर एक शानदार जुलूस वहीं कलक्टरी से शुरू हुआ था। जीप में मालती जी मालाओं से लदी खड़ी थीं। मिर्ज़ा साहब शान से बगल में खड़े थे। लल्लू बाबू ड्राइवर के पास बैठे थे। मैं उनकी बगल में जमा था। जगतसिंह मालती जी के पीछे था। भण्डारी भी लटके हुए थे। कुछ और लोग भी जीप में भरे हुए थे। आगे-आगे बाजे वाले थे। हिजड़ों को मालती जी ने पैसे दिलवाकर रवाना करवा दिया था। नारों की आवाज़ से सड़क गूंज रही थी। जगह-जगह से तमाशबीन लोग कभी फूल फेंक देते, कभी नारे लगा देते थे।

बीच बाजार से हमारा जुलूस गुजरा तो मैंने देखा—एक जगह पटरी पर जमा भीड़ के किनारे पर ही जग्गी बाबू भी खड़े थे। लोग नारे लगा रहे थे और मैंने देखा था—लिली उधर की रौनक देखकर कुछ चकराई-सी खड़ी थी और छोटे-छोटे हाथों से तालियां बजाती जा रही थी।

उसने अपने पापा से कुछ पूछा था···इधर जुलूस की तरफ कुछ इशारा भी किया था। जग्गी बाबू ने उसे क्या बताया था, यह तो नहीं सुन पाया, पर अपने अंदाज से लगा था कि लिली ने यही पूछा होगा—पापा, ये कौन हैं?

—ये एक लीडर हैं। इलेक्शन में जीती हैं!

हमारी जीप आगे निकल गई थी। और भीड़ के साथ ही वे दोनों भी पीछे छूट गए थे।

आधी रात के बाद हंगामा खत्म हुआ।

दूसरी शाम को ही वहीं गोल्डन सन होटल के बड़े लॉन में शहर के नागरिकों की ओर से मालती जी के लिए अभिनन्दन-समारोह आयोजित किया गया था। नरसी सेठ ने खुद जग्गी बाबू को बता-बताकर सारा इंतजाम करवाया था। नरसी सेठ बार-बार कहते जा रहे थे—जगदीश जी! यह तो हमारी खुशनसीबी है कि आप हमारे साथ हैं···आपको क्या कमी है···

—आप छोड़िए सेठ जी, मैं सब इंतजाम करवा दूंगा। जग्गी बाबू ने कहा तो नरसी सेठ बोले—आप शर्मिन्दा मत कीजिए जगदीश जी··· आपने मुझे एकदम अंधेरे में रखा···यह तो आपका बड़प्पन है!

—अरे, इस बड़प्पन में क्या रखा है? जग्गी बाबू ने कहते हुए मजदूरों को हिदायत दी—सोफा ऊपर···स्टेज पर···

शाम होते ही भीड़ पहुंचने लगी। लिली तितलियां पकड़ने भी नहीं आई। लॉन में यह तामझाम था। मैंने एक बार ऊपर टैरेस की तरफ देखा था। उसके रेशमी बालों वाला मासूम-सा चेहरा कार्निस पर ठोढ़ी टिकाए नीचे चल रहे सजावट के सरंजाम को देख रहा था।

शानदार जलसा हुआ। स्टेज पर हम लोग नहीं गए क्योंकि यह नागरिकों का जलसा था। कई स्कूलों के बच्चे भी आए हुए थे। महिला विद्यालय की टीचरें चुनी हुई बच्चियों को लिए खड़ी थीं। खास नागरिकों की भीड़ स्टेज पर थी। हम लोग घरवालों की तरह इधर-उधर घूम रहे थे। जग्गी बाबू बीच-बीच में आते थे, पर ज्यादा वक्त वे अपने केबिन के भीतर ही रहे थे।

मुझे यह अच्छा लगा था कि जग्गी बाबू ने लिली को नहीं रोका था। वह कुछ अचरज, कुछ सुलभ सहजता से इधर-उधर लोगों को ताक रही थी। कभी फुदकती हुई फव्वारों के पास चली जाती थी।

एक बार जग्गी बाबू ने आकर उसे बुलाया था—तू मेरे केबिन में चलकर बैठ···मेरे पास···

—नहीं पापा···हम ये देखेंगे! लिली ठुनकी थी।

—आइसक्रीम रखी है! वहां जग्गी बाबू ने उसे ललचाया था।

—हम आइसक्रीम नहीं खाएंगे पापा···प्लीज! लिली ने कहा था और वह उधर चली गई थी जहां पन्द्रह-बीस बच्चे फूलों के गुलदस्ते लिए तैयार खड़े थे।

मालती जी स्टेज पर आईं तो तालियों की गड़गड़ाहट ने उनका स्वागत किया। एक तेजस्वी नागरिक ने माइक संभाला और भाषण देना शुरू किया—दोस्तो! हमारे नगर का यह सौभाग्य है कि हम अपने बीच से, अपने प्रतिनिधि के रूप में मालती जी को अपनी रहनुमाई करने के लिए भेज रहे हैं।···इनसे बेहतर रहनुमा और कौन हो सकता है! तो आज अपनी असली कारंवाई शुरू करने से पहले मैं उन तमाम संस्थाओं के लोगों से निवेदन करूंगा कि जो मालती जी को उनकी इस शानदार सफलता पर बधाई देने के लिए यहां जमा हुई हैं, कि वे एक-एक करके

आएं और मालती जी को फूल-मालाएं या गुलदस्ते या और जो कुछ वे अर्पित करना चाहते हैं, अर्पित करें...

एक दूसरे सज्जन नाम पुकारते गए और संस्थाओं के प्रतिनिधि आ-आकर मालती जी को फूल अर्पित करते गए। कुछ ही देर में सिलसिला टूट गया और खासी भीड़ मंच पर जमा हो गई। मैंने लिली को खोजा—वह भागी हुई अपने पापा के केबिन की ओर जा रही थी। कुछ देर बाद वह लिफ्ट से नीचे आई थी। बीच में केबिन के पास जग्गी बाबू ने उसे रोका था, पर वह उन्हें कुछ समझाकर, कुछ ज़िद करके, सीधी दौड़ती हुई जलसे में चली आई थी।

उस समय स्कूली बच्चे मंच पर थे और मालती जी को गुलदस्ते भेंट कर रहे थे। लिली बेधड़क मंच पर चली गई थी और उसने मालती जी की ओर अपनी ऑटोग्राफ-बुक बढ़ाते हुए कहा था—मैडम, योर ऑटोग्राफ प्लीज़!

मालती जी ने नेता की तरह मुस्कराते हुए उसकी ओर देखा था। जगतसिंह से कलम लेकर ऑटोग्राफ किया था और प्यार से उसी तरह उसका गाल भी थपथपा दिया था जैसे वे अन्य स्कूली बच्चों के थपथपाती रही थीं। लिली उनके हस्ताक्षर देखते हुए दूसरी तरफ से उतर आई थी। उसी कोने पर जग्गी बाबू चुपचाप खड़े थे। खून के घूंट की तरह अपने आंसू पीते हुए।

लिली ने उत्सुकता से जग्गी बाबू को अपनी कापी दिखाई थी—हमने ऑटोग्राफ ले लिया पापा...यह देखिए...

—ठीक है बेटे! जग्गी बाबू ने उदासी से उसे थपथपा दिया था। और वे बेहद थके हुए-से अपने केबिन की ओर चले गए थे।

सजावट के लिए लगे गुब्बारों में से लिली ने एक तोड़ लिया था। और उसे उछालती-खेलती वह उनके पीछे-पीछे चली गई थी।

जलसा चलता रहा। लल्लू बाबू ने मुझसे कहा—आज चाय-कॉफी ही चलती रहेगी भइये? चाय-कॉफी पीने से मुंह का सवाद बिगड़ जाता है...

—जगतसिंह से कहें, शायद वह आपके लिए कुछ इंतज़ाम कर दें...

मैंने कहा।

—इसे छोड़ो, भइये…

तभी मिर्जा साहब आ गए, तपाक से बोले—लल्लू बाबू! आपने ऐसी शतरंज बिछाई कि सब पिट गए…जवाब नहीं है आपका। असली हीरो तो आप हैं!

—भइये, जीत जाओ तो हीरो, हार जाओ तो जीरो! इस वक्त तो अपन जीरो बने घूम रहे हैं…कुछ इंतजाम हो जाए तो अपन भी हीरो हो जाएं, भइये! लल्लू बाबू ने आंख दबाकर कहा।

मिर्जा साहब समझ गए। बोले—अरे, क्या बात करते हैं लल्लू बाबू! आपके लिए किसी चीज की कमी हो सकती है? लल्लू बाबू ने फौरन खुराक लगी शीशी निकालकर मिर्जा साहब की शेरवानी की जेब में सरका दी—इसीमें रहे तो ठीक है। और एक प्लेट से मुट्ठी भर दालमोठ लेकर उन्होंने कागज के नेपकिन की पुड़िया बांधी और मेरी जेब में सरका दी —पूरा इंतजाम कर लिया जाए, भइये!

उधर मंच से भाषण होते रहे।

धीरे-धीरे सब शांत हो गया। जलसा समाप्त हो गया। हम लोग अपने कॉटेज में लौट आए। मालती जी बहुत थकी हुई थीं। वे सीधी ऊपर चली गईं।

अब मेला उखड़ रहा था। मालती जी को दिल्ली जाने की जल्दी थी। जगतसिंह ने सब कागज-वागज समेटने शुरू कर दिए थे। बिंदा ने सामान संभाल लिया था। हम लोगों ने अपनी चीजें इकट्ठी कर ली थीं। हिसाब-किताब बाकी रह गया था। बहुत-से पेमेण्ट्स होने थे। मालती जी ने सुबह-सुबह ही फोन करके ऊपर बुला लिया था। मैं पहुंचा तो उन्होंने कहा—मैं तो कल जाने की सोचती हूं…यह हिसाब-किताब

आप निपटाते रहिएगा…

—सब हिसाब-किताब मैं कैसे निपटा पाऊंगा ! मैंने खास मसलहत से बात कही थी।

—क्यों ? ऐसा कौन-सा बड़ा हिसाब-किताब है ? जो जरूरत पड़े, बता दीजिएगा। दिल्ली से भेज दूंगी—मालती जी बोली।

—वहां से वह नहीं निपट पाएगा ! मैंने कहा तो उन्होंने गौर से मुझे देखा।

—मैं समझी नहीं। वे बोली।

—शायद आपको मालूम नहीं…लिली आई हुई है। दो-एक दिन में ही वापस अपने स्कूल चली जाएगी।

—लिली…वह यहीं है? सचमुच…! वे मोम की तरह पिघल उठी थीं।

—जी ! आप उसे पहचान भी नहीं पाईं…

—कब, कहां…मुझे पता ही नहीं…बिलकुल नहीं मालूम ! वे कातर होकर बोली थीं।

—कल जलसे में जो बच्ची आपका हस्ताक्षर लेने आई थी…

—ओह ! वे बहुत गहरी सांस लेकर रो पड़ीं। जब कुछ शांत हुईं तो शून्य में देखती रही थीं। फिर धीरे-धीरे बोली थीं—मेरी जिंदगी क्या हो गई है ! ओह…आंसू पोंछकर वे कहने लगीं—ऊपर होगी…चलिए। चलेंगे जरा…

हम ऊपर पहुंचे तो जग्गी बाबू का दरवाजा बंद था। धीरे से खटखटाया तो कोई आवाज नहीं आई। मैंने खिड़की से जाकर देखा : लिली और जग्गी बाबू—दोनों सो रहे थे। लिली की एक बांह जग्गी बाबू के सीने पर रखी हुई थी। पंखा चल रहा था और एक छोटा-सा लाल गुब्बारा हवा के झोंको में इधर-उधर उड़ रहा था। मैंने इशारे से मालती जी को बुलाया था। मालती जी खिड़की की छड़ें पकड़े एकटक देखती रह गई थीं। वे मूर्ति की तरह जड़ हो गई थीं।

मैं जैसे-तैसे उन्हें लेकर लौट आया था।

मालती जी भयानक हलचल में फंसी हुई थीं। उनकी समझ में कुछ नहीं आया तो वे नहाने चली गईं। नहाकर बाथरूम से निकलीं तो

बिलकुल गृहस्थिन की तरह लग रही थी। मैंने उन्हें गौर से देखा···कहीं कुछ बदला हुआ था। और तब एकाएक मेरा ध्यान उनके चेहरे की ओर गया था—निर्मल धुला हुआ चेहरा। खुले हुए बाल···और माथे पर एक लाल छोटी-सी बिंदी। इस वक्त उन्हें कोई देखता तो पहचान ही नहीं पाता कि ये वही मालती जी हैं। आते ही उन्होंने फोन उठाया—क्या नम्बर है?

—जग्गी बाबू का? टू सेवन एट!

उन्होंने फोन मिलाया। कुछ देर आहट लेकर फिर नंबर घुमाया। फिर भी कुछ प्रतिक्रिया नहीं हुई तो बोलीं—यह लगता ही नहीं। आप देखिए।

मैंने नम्बर मिलाया। इंगेज की आवाज आई—इंगेज है···

—तो जाग गए हैं। चलेंगे ज़रा···

—जागे नहीं होंगे। जग्गी बाबू सोने से पहले रिसीवर उठाकर नीचे रख देते हैं। मैंने कहा।

तब तक बिंदा ने आकर खबर दी—चौधरी साहब मिलने आए हैं।

मालती जी को उनका आना बहुत अच्छा नहीं लगा। अभी वे बेमन से चौधरी साहब से मिलने के लिए तैयार हो रही थीं कि पता चला, दो-तीन लोग और आ गए हैं। लल्लू बाबू भी लपकते हुए आ गए थे। मालती जी को उनसे मिलने बाहर वाले कमरे में जाना ही पड़ा। उन्होंने बाल बांधे, साड़ी ठीक की, और देखते-देखते उनका पूरा व्यक्तित्व बदल गया।

चौधरी साहब ने कहा—अरे, अब हमारे गांव तक पक्की सड़क भी नहीं बनेगी क्या? उनके बोलते ही मुझे दावत वाला वह दृश्य याद आ गया जब वे दाल, घी और हरी मिर्चें मांग रहे थे। उन्होंने बात जारी रखी—अब तो आप जीत गई हैं···अब भी सड़क नहीं बनेगी क्या?

मालती जी का व्यक्तित्व कैसे बदलता है, यह मैंने बखूबी उसी समय देखा। दूसरे साहब बिसातियों की तरफ से आए थे। बोले—जी, वह तहसील की पटरी पर हमें सोलह-सत्रह बिसातियों की दूकानें हैं, म्युनि-

सिपल बोर्ड ने आर्डर जारी किया है कि दुकानें हटाई जाएं। हम गरीब लोग हैं···आप ही बताइए, कहां जाएंगे? अगर आप कलक्टर साहब से कह दें और कलक्टर साहब चेयरमैन साहब से कह दें तो···वे साहब हाथ मलते खड़े हो गए थे।

—क्यों भइये, चुनाव-प्रचार के दौरान हम अपना झण्डा लगाने गए थे, तब तो आप लोगों ने दुरदुरा के भगा दिया था। जिनका झण्डा फहराया था, उन्हींसे कहो जाकर···मैं कलक्टर साहब से कहूं, कलक्टर साहब चेयरमैन साहब से कहें, समझे भइये! लल्लू बाबू ने बिना हिचके बिसातियों की ओर से आए आदमी से कह दिया था।

बिसातियों के प्रतिनिधि का मुंह उतर गया था। वह मालती जी की ओर देखता रहा कि शायद कुछ बात बन जाए। मालती जी ने सीधा जवाब दे दिया—इसमें मैं क्या कर सकती हूं? यह तो चुंगी वालों का मामला है।

वे जल्दी से जल्दी सबको टरका देना चाहती थीं।

आखिर हम सबसे निपटकर फिर ऊपर पहुंचे। लिली साबुन के बुलबुले बना रही थी। जग्गी बाबू तैयार हो रहे थे।

—आइए। जग्गी बाबू ने बहुत कायदे से कहा।

लिली उन्हें देखती रह गई। मालती जी की आंखें लिली पर ही उलझी रह गईं। लिली अपने बुलबुले बनाने में मशगूल थी। बड़े कठिन क्षण थे।

जग्गी बाबू ने टाई बांधते हुए पूछा—कहिए। कोई और जरूरत? मैं आपके किसी और काम आ सकता हूं!

एक क्षण के लिए भयानक सन्नाटा छा गया। फिर टूटती-सी आवाज में मालती जी ने कहा—लि···ली···से···

—लिली बेटे, देखो ये तुमसे मिलने आई हैं। इधर आओ! जग्गी बाबू ने बात बहुत आसान कर दी। लिली साबुन की शीशी रखकर उनके पास आकर ठिठक गई।

मालती जी का बांध टूट गया। मालती जी ने उसे प्यार से बांहों में

समेटते हुए गीली आंखों को झपकते हुए कहा—बेटे, मैं···मैं···तुम्हारी मां हूं !

—जी ! लिली ने बेहद मामूली तरीके से कहा और बारी-बारी से उसने हम तीनों को आंख उठाकर देखा, जैसे वह मालती जी के शब्दों के अर्थ ही न समझी हो !

—तुम मेरी बेटी हो···मेरी ! मालती जी ने उसे प्यार करते हुए कहा।

—जी ! लिली ने ऐसे जवाब दिया जैसे स्कूल में किसी सख्त मास्टरनी ने सवाल समझाकर पूछा हो—समझ में आ गया ?

—तुम मुझे पहचानती हो ?

—जी ! लिली ने उसी तरह कहा था और कसमसाकर वह उनकी बांहों से निकल गई थी।

—अच्छा हुआ कि तुम आ गईं ! जग्गी बाबू ने माहौल की जड़ता को फिर तोड़ा था—एक दिन लिली के सामने मुझे सब साफ करना था। इसे बताना था कि तुमने इसे जन्म तो दिया है, पर तुम इसकी मां नहीं हो ! अच्छा हुआ कि वह वक्त आज ही आ गया···इस एकाएक और अकस्मात् आ गए अंधड़ के बाद फिर किसी नतीजे पर पहुंचना जरूरी हो गया था···

—कैसा नतीजा ?

—यही कि लिली भी सच्चाइयों को जान ले !

—कैसी सच्चाइयां ?

—हूं ! जग्गी बाबू व्यंग्य में मुस्कराए थे—यही, जो सामने हैं। लिली भी जान ले कि तुम क्या हो···अब वह समझदार हो रही है···

—मां के अलावा और मैं क्या हो सकती [redacted] उसके लिए !

—जो कल थीं···जब उसने ऑटोग्राफ लिया था··· वह भी तो सच्चाई ही थी। नहीं ? जग्गी बाबू ने कहा था।

—मुझे कुछ भी मालूम नहीं था···मालती जी दुखी स्वर में बोली थीं।

—उसे भी नहीं मालूम था !

सन्नाटा फिर छा गया था। लिली अबोध आंखों से सब कुछ देख रही थी। वह जैसे सुन कुछ नहीं रही थी। मालती जी ने आंखें पोंछ ली थीं। जग्गी बाबू ने सख्त नजरों से उन्हें देखा था। फिर कुछ अटककर बोले थे—मेरे खयाल से तुम मुझे लिली का वास्ता देकर किसी नतीजे पर पहुंचने के लिए मजबूर नहीं करोगी!

—आप मुझे पूरी तरह जलील कर लेना चाहते हैं! मालती जी के स्वर में थोड़ी सख्ती थी।

—और तुम मुझे पूरी तरह इस्तेमाल कर लेना चाहती हो···देखो मालती, अब मेरी पूर्ति···मेरे जीवन की मंजिल लिली के सफर में ही पूरी होगी। मुझे अपनी पूर्णता लिली के जरिए ही मिलेगी···और तुम्हारी मंजिल की यात्रा में न लिली की कोई जगह है, न मेरी।

—सुनिए, आप लिली को लेकर दिल्ली आ सकते हैं?

—किसलिए?

—मुझे कल जाना है···अगर आप आ सकें तो···

—लिली को भी कल जाना है! देखो मालती, जिंदगी में हर चीज नहीं मिलती। आदमी को चुनाव करना पड़ता है कि उसे क्या चाहिए··· इस चुनाव में जो चीजें छूट जाती हैं, उनके लिए दुःख नहीं करना चाहिए! तुमने जो ठीक समझा···उसे चुन लिया था। मैंने जो ठीक समझा, वह चुन लिया था। अब पछताना कैसा?

—पछताना···मालती जी की बात अधूरी रह गई थी।

—हां मालती, पछताने में कुछ नहीं रखा है, जीतने वाला तो जीतता ही है, हारने वाला भी एक दिन जीत जाता है···लेकिन पछताने वाला हमेशा पछताता ही रह जाता है।

—मैं पछता नहीं रही हूं!

—यही ठीक है! इसलिए यह और भी ठीक है कि हम बार-बार पछताने के लिए बार-बार न मिलें। हम जब-जब मिलें···पछताते ही रहे। बेहतर है कि हमारे सामने जो कुछ है उसे साहस से स्वीकार करें। जो है, वह है; जो नहीं है, वह नहीं है!

—हां—जो है, वह है। जो नहीं है, वह नहीं है! मालती जी ने

बहुत गहरी सांस लेकर कहा था।

—फिर भी तुम हो, मैं हूं और लिली भी है···लेकिन हम अपनी-अपनी जगह पर हैं ! आज की जिंदगी इतनी ज्यादा उलझनों से भरी हुई है मालती, कि अपनी सब भावनाओं के लिए, अपनी सब इच्छाओं के लिए जी सकने का पूरा-पूरा वक्त किसीके पास नहीं है, टुकड़ों-टुकड़ों में जीना और पछताना···क्या रखा है इसमें ! जग्गी बाबू ने कहा था और वे कोट पहनकर तैयार हो गए थे।

मालती जी उन्हें उठता देख खुद भी खड़ी हो गई थीं।

—मालती···इतने दिनों अकेले रहकर मैंने यही सोचा है। तुम्हें अपनी बेरफ्तार दौड़ती जिंदगी में सोचने का वक्त ही कहां मिला है ? मशीनें नहीं सोचतीं, मशीनों के लिए आदमी सोचता है ! और सफलता··· सफलता सिर्फ एक मशीन है ! अब तुम औरत नहीं—एक सफलता बन गई हो ! अब तुम भी कुछ नहीं हो। सिर्फ एक सफलता रह गई हो···अब तुम्हारी मुक्ति और ज्यादा सफल होते जाने में है···और कोई रास्ता नहीं है। यही तुम्हारा एकमात्र रास्ता है···जग्गी बाबू बोले थे।

मालती जी ने आंखें भरकर उन्हें देखा था। लिली को देखा था। आगे बढ़कर उन्होंने बहुत प्यार से लिली को चूमा और बेतरह रो पड़ी थीं। फिर आंखें नीचे किए-किए ही उन्होंने जग्गी बाबू को नमस्ते किया था और आंचल मुंह में दबाए बाहर आ गई थीं।

उन्हें कमरे में छोड़कर मैं नीचे चला आया था। कमरे में घुसते ही उन्होंने इतना ही कहा था—गुरुसरन जी, आज मैं किसीसे भी नहीं मिल पाऊंगी। जो भी आए, समझा दीजिएगा।

दूसरे दिन मालती जी को जाना था। स्टेशन पर बहुत भीड़ जमा हुई थी। वही मालाएं और फूल।

जग्गी बाबू भी लिली को पहुँचाने जा रहे थे। दोनों की गाड़ियाँ पाँच मिनट के अंतराल से छूटती थीं। दो दिशाओं को जाने वाली गाड़ियाँ! एक दिल्ली, दूसरी पचमढ़ी। जग्गी बाबू लिली को लिए हुए आए थे। लिली की पतली उंगलियों में खाने का पैकेट झूल रहा था—वही गोल्डन सन वाला। जग्गी बाबू ने चुपचाप वह पैकेट बिंदा को थमा दिया और लिली को लिए हुए अपनी गाड़ी की ओर चले गए थे।

मालती जी की गाड़ी जब छूटी तो वे भरी आँखें लिए दरवाज़े पर नमस्ते करती खड़ी थीं और नारे लग रहे थे—मालती जी! ज़िंदाबाद! मालती जी! ज़िंदाबाद!

उन्हें विदा देकर मैं जग्गी बाबू की गाड़ी पर आ गया था। लिली अपनी वही साबुन के बुलबुलों वाली शीशी लिए खिड़की के पास बैठी थी। आखिर उनकी भी गाड़ी छूटी। लिली बुलबुले उड़ाती चली जा रही थी। जग्गी बाबू चुपचाप कहीं देख रहे थे।

मैं भारी कदमों से लौट रहा था। कानों में 'मालती जी! ज़िन्दाबाद!' के नारे गूंज रहे थे और लग रहा था कि अब अपनी खिड़की की छड़ें पकड़े मालती जी को शायद वही दृश्य दिखाई दे रहा होगा जो उन्होंने कल सुबह खिड़की से देखा था—लिली और जग्गी बाबू गहरी नींद में सोते हुए। लिली की नरम बांह उनके सीने पर रखी हुई और हवा के झोंकों में इधर-उधर टकराता हुआ वह लाल गुब्बारा···फोन के नीचे रखा हुआ रिसीवर···

और जग्गी बाबू···वे शायद देख रहे होंगे···लिली को प्यार करके एकदम फूट-फूटकर रो पड़ने वाली मालती जी को···या अपना गिलास छुपा लेने वाली मालती जी को···या लिली को ऑटोग्राफ देने वाली मालती जी को···

और लिली साबुन के बुलबुले उड़ाती अपने में मस्त होगी।

इसके सिवा वे तीनों और क्या कर रहे होंगे!

○○○

मोहन प्रिंटिंग सर्विस, शाहदरा, दिल्ली